मालवीय प्रकाश

मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान की हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष -1 | अंक - 4 | जयपुर | दिसम्बर- फरवरी - 2014 | पृष्ठ संख्या - 1

निदेशक की कलम से...

आचार्य (डॉ.) इन्द्र कृष्ण भट्ट

निदेशक- मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान जयपुर

मालवीय प्रकाश के माध्यम से मैं संस्थान में कार्यरत महानुभावों से कहना चाहूँगा कि कल का भारत निर्माण आज के कठोर परिश्रम से ही होगा। मैं सभी शिक्षकों एवं छात्रों से आह्वान करता हूँ कि इस संस्थान को भविष्य के नव -भारत का एक ऐसा उभरता हुआ संस्थान बनाएँ जो कि अनुसंधान एवं शोध कार्यों के लिए उपयुक्त स्थान हो। प्रयास चाहे छोटा हो या बड़ा लेकिन वह बहुत मायने रखता है । हम सभी को अपने दायित्वो को समझते हुए पूर्ण धैर्य एवं निष्ठा के साथ संस्था एवं देश के विकास में सतत् कार्य करना चाहिए। इसके लिए उद्देश्यों में एकता एवं जागरुकता आवश्यक है। यह बेहतर संवाद एवं समन्वय से ही सम्भव है। हमें एक -दूसरे को सुनना, समझना एवं एक-दूसरे का सम्मान करना चाहिए।

हमारा ध्येय क्या हो? हमारा समग्र प्रयास संस्थान के सम्पूर्ण विकास के लिए होना चाहिए जिससे छात्रों में जीवन मूल्यों का विकास होता है।

जब हम सोचते है कि शिक्षक के रुप में हम इस संस्थान में क्या कर रहे है? तो हमें गर्व से महसूस करना चाहिए कि हम यहाँ कल के भारत-निर्माण करने वाले छात्रों को पढा रहे है, बना रहे हैं। इस क्षेत्र में हमें संस्थानो के आधारभूत ढाँचा-प्रयोगशाला, कक्षाकक्ष, पुस्तकालय आदि को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का बनाना चाहिए। यह एक बहुत बड़ी चुनौती है किन्तु इस संस्थान को वैश्विक स्तर का बनाने के लिए हमें सामूहिक भावना से हर क्षेत्र एवं विभाग में आगे बढकर काम करना होगा।

प्यारे विद्यार्थियों, हम सभी शिक्षिक इस विरासत को युवा पीढी को सौंपने के लिए कर्तव्यनिष्ठ हैं । हमें युवाओं से पूर्ण आशा है क्योकि उन्होने अपनी क्षमताओं का अनेक क्षेत्रो में प्रदर्शन किया है। हमारे युवा राष्ट्र के भविष्य के रचनाकार हैं। हमे उन्हे शिक्षित करना चाहिए एवं उनमें दृढता, देशभक्ति, नेतृत्व और देश सेवा की भावना का संचार करना चाहिए। शिक्षा से प्राप्त ज्ञान बल, नवीन अवसरों के अनेक द्वार खोलता है। अतः शिक्षा में नैतिक मूल्यों, स्वास्थ्य एवं कुशलता जैसे मूलभूत तत्वों का समावेश होना चाहिए।

हमारी मातृभूमि विभिन्न भाषाओं, संस्कृति एवं रीति-रिवाजों से सज्जित हैं। भारत ने शिक्षा के बल पर विभिन्न विदेशी यात्रियों को अपनी ओर आकर्षित किया है।

स्वामी विवेकानन्द जी ने भी जिसकी पुष्टि अपने कथन में की है ''एक प्राचीन धरा, जहाँ पर ज्ञान (बुद्धि) ने सर्वप्रथम अपना घर बसाया, उसके पश्चात वह अन्य देशो में गया।'' भारत प्रारम्भ से ही एक परस्पर समावेशी राष्ट्र रहा है । भारत के मसाले,रेशम, कपास एवं पारम्परिक सामानो की माँग विदेशो में हमेशा रही हैं। भारत के यात्री ये सभी सामान लेकर विदेशों में जाते थे एवं सामान के साथ -साथ भारत की महान संस्कृति एवं सम्पन्नता से भी विदेशियो को अवगत कराते थे।

हमने प्राचीन काल से अभी तक बहुत प्रगति की हैं किन्तु आज भी हम कई समस्याओं से घिरे हुए है जैसे- गरीबी, भूख, बीमारियाँ एवं निरक्षता, अतः हम सभी भारतवासियो को देश के पुर्निर्माण मे अग्रसर होना है जिसमें शिक्षण संस्थाओं का योगदान सर्वोपरि होना चाहिए।

धन्यवाद, जय हिन्द!

आचार्य (डॉ.) इन्द्र कृष्ण भट्ट

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय एक विलक्षण व्यक्तित्व

''संसार में भारत के समान दूसरा कोई देश नहीं है। इस बात के लिये हमें गौरान्वित व कृतज्ञ होना चाहिये कि उस कृपालु परमेश्वर ने हमें इस पवित्र देश में पैदा किया।''

मदन मोहन मालवीय

गत तीन अंकों में पाठकों को महामना जी के प्रारम्भिक जीवन का परिचय, उनके विचार, जीवन मूल्यों व समाज में उनके योगदान पर विस्तृत चर्चा से अवगत कराया गया। इस अंक में उनकी चारित्रिक विशेषताओं से साक्षात्कार कराने का प्रयास कर रही हूँ। महामना जी की शख्सियत अनमोल थी, वह विलक्षण प्रतिभा के धनी थे। यद्यपि ऐसे अद्भुत व्यक्तित्व की चर्चा करने की काबिलियत ना तो मेरी कलम में है, ना ही उनकी क्षमताओं और दैवीय गुणों को कलम बद्ध किया जा सकता है, उपरान्त इसके मैं महामना जी जुड़े कुछ वाक्यों के ज़रिये उनकी महान चारित्रिक विशेषताओं व लेखों का आपसे परिचय कराने रही हूँ। इसी संदर्भ में सुभाष चन्द्र बोस के उद्गार पंक्तिबद्ध करते हुये अपार गर्व का अनुभव होता है, ''आज जिस अग्नि के सामने खड़े होकर प्रसन्नता से नवयुवकगण नाचते हैं, उस अग्नि को प्रज्वलित करने में मालवीय जी ने चंदन की लकड़ी का काम किया है। इसे मत भूलना।'' - **सुभाष चन्द्र बोस**

एक अनमोल शख्सियत

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय

1. वायसराय से बड़े गरीब के आँसू

एक बार कुछ लोगों ने बड़े संकोच के साथ उनसे जब यह निवेदन किया कि महाराज, लोग कहते हैं कि आप नियम समय पर कहीं नहीं पहुंचते, तब उन्होंने अपनी चिर प्रफुल्ल मुद्रा में कहा, लोग ठीक कहते हैं। यह मेरा एक बड़ा दुर्गुण हो सकता है। परन्तु मैं विवश हूँ। मेरे सामने जो कार्य अतिथि की भांति अकस्मात् आ गया, उसे निपटाये बिना मैं किसी भी निश्चित कार्य में मन नहीं लगा सकता।

जब मैंने कहा, महाराज यह तो ठीक है, परन्तु कार्य का महत्त्व भी देखना होता है।

शेष पृष्ठ 2 पर...

सम्पादकीय...

प्रिय पाठकों,

महामना पं. मदन मोहन मालवीय जी के सिद्धांतों एवं आदर्शों के प्रचार प्रसार हेतु संपादित 'मालवीय प्रकाश' एक बार पुनः आपके लिये प्रस्तुत है। किसी व्यक्ति का कार्यक्षेत्र राजनैतिक, किसी का समाजिक तो किसी का धार्मिक रहता है परन्तु महामना जी भारत की ऐसी विभूति थे, जिनको जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उच्च प्रशंसनीय तथा स्मरणीय स्थान प्राप्त था। उन पर ही यह उपाधि सुशोभित होती है ''न भूतोः नः भविष्यति''।

वह सिर से पैर तक हृदय ही हृदय थे। उनका विशाल हृदय धनी व निर्धन, विद्वान व सामान्य व्यक्ति, हिन्दू तथा अहिन्दू सभी को समानता से स्वीकार करता था। वह प्राचीन भारत के महर्षि एवं आधुनिक भारत के राजर्षि थे। महान कार्य करने के कारण ही उनको महामना की उपाधि से संबोधित किया गया।

मैं पाठकगण का पत्रिका की विषय वस्तु में बढ़ती रुचि पर अत्यंत प्रसन्नता व गौरव का अनुभव करती हूँ। आपके सुझावों व मार्गदर्शन के लिये तहे दिल से धन्यवाद स्वीकार करें।

मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय द्वारा हिन्दी भाषा को प्रोत्साहित करने की दिशा में किये गये प्रयासों की श्रृंखला में उठाये गये इन नन्हें कदमों को आपके शुभाशीष की निरंतर आवश्यकता की दरकार होगी। इस महापुरुष की स्मृति को शब्द कुसुमांजलि समर्पित करने के इस सुवसर प्रदान करने के लिये मैं मानव संसाधन एवं विकास मंत्रालय कार्यकारिणी की आभारी हूँगी।

इस दिशा में संस्थान द्वारा किये गये प्रयासों को संस्थान सदस्यों द्वारा की गई सराहना व सहायता के लिये बहुत-बहुत साधुवाद। आगे आने वाले अंको में भी इसी तरह आपका सहयोग व योगदान हमें मिलता रहेगा, इसी आशा एवं ढेरों शुभकामनाओं के साथ।

सस्नेह,

भवदीया,

डॉ. ज्योति जोशी,

सम्पादक एवं सह-आचार्य, रसायन शास्त्र विभाग, मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर

9413971604, 9549654852, 0141-2713350, jojo_jaipur@yahoo.com

malaviyaprakash.lokmat@gmail.com | jjoshi.chy@mnit.ac.in

ईश्वर कारयिता कब बनता है

''न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोग स्वभावस्तु प्रवर्तते।'' (5.17)

लोक के लिये समर्थ ईश्वर न कर्तृत्व का निर्माण करता है और न कर्म का न कर्मफल के संयोग का। यह तो स्वभाव अर्थात प्रकृति का व्यवहार है। सर्व व्यापी ईश्वर न किसी के पाप को लेता है न किसी के पुण्य को। प्राणी का ज्ञान अज्ञान से ढक गया है। इसलिये वह मोह में पड़ा हुआ है।

किसी को क्या करना पडेगा। ऐसा विधान ईश्वर नहीं रचता है। कौन सा कार्य होना ही चाहिये, ऐसा भी कोई विधान वह बनाता नहीं है। किसी के कर्म का फल देने ईश्वर नहीं आता। यह सब प्रकृति करती है। गीता में बार बार आया है 'प्रकृतेः क्रियमाणनि गुणैः कर्माणि सर्वशः'। सब कर्म प्रकृति द्वारा ही किये जाते है।

यहाँ ईश्वर के लिये प्रभु शब्द आया है अर्थात् ईश्वर सर्व समर्थ है। इसलिये यह नहीं कहा जा सकता कि किसी विशेष के लिये वह कर्तव्य, कर्म और कर्म फल का संयोग नहीं आयोजित करेगा। सम्पूर्ण भक्ति शास्त्र इस पक्ष में है कि भगवान स्वयं गीता में कहते है कि अनन्य चिन्तन करने वालों का योग-क्षेम मैं वहन करता हूँ। इसलिये जो भगवत शरणागत है। उन्हें प्रारब्ध स्वतन्त्र रूप से फल देने में समर्थ नहीं होता। अनेक बार वे जो कुछ करना चाहते है उसमें यदि उनका अहित हो तो भगवान बलात् उन्हें रोक देते है। श्रीमद्भागवत में वृत्रासुर कहता है-''मेरे स्वामी अपने जनों के लिये अर्थात् जिनको वे अपना जन स्वीकार कर लेते है उन्हें धर्म और काम के प्रयत्न में सफल नहीं होने देते।''

इसलिये इस नियम को अकारण नहीं मानना चाहिये कि ईश्वर सदा तटस्थ दृष्टा रहेगा। वह दयामय है, भक्त वत्सल है।

शेष पृष्ठ 7 पर...

उदारता

रेल यात्रा के समय का एक प्रसंग है चारपाँच छात्र आपस में वार्तालाप कर रहे थे और सामने खादी के कपड़ो में बैठे मूँछो वाले व्यक्ति का उपहास कर रहे थे। इसी बीच टिकट चैकर आया और उनसे टिकट मांगने लगा। चूंकि वे सभी बिना टिकट थे इसलिये टिकट चैकर उन्हे अभद्र भाषा में डाँटने लगा। सामने बैठे साधारण व्यक्ति का यह सहन नहीं हुआ। उन्होने विनम्र भाषा में टिकट चैकर से कहा ''आपको अभद्र भाषा का प्रयोग करने का कोई अधिकार नहीं है। अपनी जेब से उनका जुर्माना भरते हुए उन्होने कहा इनका जुर्माना इससे पूरा कर लीजिए।

मुगलसराय स्टेशन पर जैसे ही वे व्यक्ति उतरे तो वहाँ एकत्र भीड़ ने ''डॉक्टर राजेन्द्र प्रसाद जिन्दाबाद'' से उनका स्वागत किया। ये देख कर वे सभी छात्र शर्मिंदा और आश्चर्य चकित हो गये। डॉ राजेन्द्र बाबू बोले आप परेशान ना हो। आप की बातें उम्र का तकाजा है किन्तु यदि आप अपनी शक्ति राष्ट्रहित में लगायें तो अच्छा रहेगा।

उनकी बातें सुनकर सभी छात्र नतमस्तक होकर संकल्पबद्ध हो गये कि वे भी राष्ट्र सेवा मे समर्पित रहेंगे।

संकलनः अंशु सक्सेना

स्थापना शाखा, नियोजन एवं प्रशिक्षण विभाग

इस अंक में ...

विवरण	पृष्ठ संख्या
निदेशक की कलम से...	1
महामना पं. मदन मोहन मालवीय एक ...	1
सम्पादकीय	1
ईश्वर कारयिता कब बनता है।	1
उदारता	1
दैनिक जीवन में रसायन विज्ञान...	3
भारत के आध्यात्मिक राजदूत ...	3
मैं तो निर्जीव हूँ	3
आशियाँ बना लें हम	3
महामना मालवीय का हिन्दी भाषा ...	4
अमर प्रेम की देवी	4
बंद दरवाजे के पीछे का सच	4
त्रासदी	5
प्रथम आगमन	5
पर्यावरण प्रदूषण	6
माँ की ममता की याद	6
एक शिकायत है तुम से	6
बचपन	6
मुझे अभिमान हो	6
बस कुछ कदम दूर ...	6
संगति का प्रभाव	6
राहुल के पापा	7
पूजनीय कौन	7
हे पथिक तेरी विजय हो	7
युवाओं में आध्यात्म के अभ्यास ...	8
मालवीय जी की दूरदर्शिता एवं ...	8

पृष्ठ 1 का शेष...

1. वायसराय से

वे कहने लगे, सब कार्य एक जैसे ही हैं। तुम कहोंगे, निश्चित समय पर वायसराय से भेंट करना आवश्यक है। मैं समझता हूँ कि उसी समय जो बुढ़िया रोती हुई आ गई उसके आंसू पोंछना आवश्यक है। वायसराय से भेंट करके जो सेवा होगी वह शायद कोई और कर ले पर उसके आंसू पोंछने का काम जो भगवान ने दरवाजे पर भेज दिया है, उसकी उपेक्षा कैसे की जाय? अब यदि वायसराय से मिलने वाला कार्य मुझे ही करना है तो भगवान के संकेत से वह कार्य अवश्य मेरी प्रतीक्षा करेगा। उस कार्य के होने का उचित समय भी वही होगा सभी तो भगवान के कार्य ही है। सब एक जैसे ही हैं। मनुष्य इस संसार में भगवान के कार्य करने ही आया है, वही मैं कहता हूँ। भगवान को जब जो काम करवाना होता है, करवा लेते हैं।

2. सनातन धर्म

मैं इस सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा को, इसके सभापति रायबहादुर राम शरण दास, मंत्री गोस्वामी गणेश दत्त तथा अन्य कार्यकर्त्ताओं को हृदय से बधाई देता हूँ। साथ ही साथ यह कहना भी चाहता हूँ कि प्रचार का कार्य हो रहा है। १४५ उपदेशक घूम रहे हैं। कई इमारतों और मंदिरों का निर्माण हुआ है। महावीर दलों का कार्य सराहनीय है। उनको बधाई देता हूँ। बड़े-बड़े मेलों में जाकर वह कार्य करते हैं। अभी बिहार जाकर महावीर दल सेवा में लगा रहा। परन्तु मैं केवल इतने ही से पूर्ण: संतुष्ट नहीं। इस कार्य को दृढ़ और सुव्यवस्थित करने के लिये स्थायी फंड का होना अनिवार्य है। यह काम जो इस समय एक नवयुवक तपस्वी के कंधे पर है, वहाँ से हटकर १०-२० हजार प्रेमियों के कंधे पर पड़ना चाहिए। इसकी अत्यन्त आवश्यकता है। वर्तमान युग में किसी भी संस्था के प्रचार में सफलता प्राप्त करने के लिये कार्यकर्त्ताओं में उत्साह का होना आवश्यक हैं। वे कभी भी हिम्मत न हारें। ईसाई कितने दूर प्रदेशों से आकर अपने धर्म का प्रचार करते हैं। करोड़ों रूपये खर्चकर शिक्षा का भार उन्होंने लिया है। अपने धर्म के प्रचार के लिये वे यत्न कर रहे हैं। मुसलमान भाई भी कितना यत्न करते हैं। धन इकट्ठा कर रहे हैं, अपने उपदेशों को तैयार करते हैं। बुद्ध धर्म के भी अनुयायी चीन और जापान से यहाँ आकर प्रचार करते हैं। इससे आपको चेतावनी मिलती है। मकान की रखवाली के लिए जिस प्रकार चौकीदार सदा चौकन्ना रहता है उसी प्रकार आप को भी सदा सावधान रहना चाहिए। यदि चौकीदार कुछ समय तक काम करके सो जाय तो चोरी होने का डर है त्यों ही यदि सनातन धर्मी १० वर्ष काम करके उत्साहहीन हो जाय तो सब काम बिगड़ जायेगा। इसलिये आप इस संगठन को और भी दृढ़ करें। मुझे आशा है कि सनातन धर्मी, जिन्होंने इस मन्दी के समय में भी इस संस्था को धन से सींचा है, सदा इसी तरह सींचते रहेंगे।

धर्म की आवश्यकता

कुछ लोग ख्याल रखते हैं कि धर्म की कोई आवश्यकता नही है, जितनी इसकी चर्चा कम हो उतना ही अच्छा है। यह उनकी गलत समझ है। आज तो बहुत से वैज्ञानिक भी इस बात का समर्थन करते हैं कि धर्म की शिक्षा मनुष्य जाति के हित के लिए आवश्यक है। हिन्दू जाति सदैव धर्म को ऊँचा स्थान देती आई है। जितनी इसे धर्म की आवश्यकता है उतनी और चीज की नहीं। जिस बात की शिक्षा सनातनधर्म सबसे पहले देता है वह है ईश्वर का ज्ञान। वह बतलाता है कि संसार का रचने वाला, पालन करने वाला, संहार करने वाला केवल वही परमात्मा है, जिसकी कोई सानी नहीं। वह कभी मरता नहीं। वह घट-घट में व्यापक है। न केवल मनुष्यों ही में बल्कि पशुओं एवं कीड़ों में भी वही परमात्मा है। वही सब जगह व्याप रहा है। वेदव्यास जी ने महाभारत में कहा है कि परमात्मा प्राणी-प्राणी में व्यापक है। यह हिन्दू धर्म का मूल सिद्धान्त है। इससे धर्म निकलता है। अब इस धर्म का निचोड़ सुन लो। जो तुम्हें अपने लिये अच्छा न लगे वह दूसरे के लिए मत करो, जब एक बार यह मान लिया कि ईश्वर घट-घट व्यापी है तब सिद्धान्त है कि जो बात अपने लिये चाहते हो वही दूसरों के लिये चाहो। जब आप चाहते हैं कि आप की बीमारी में कोई आप की सहायता करे, सुख देवे, तो इसी तरह आप दूसरों को सुख दो, दवा दो। यही धर्म का सिद्धान्त संसार के समस्त प्राणियों के लिये है और यही सब का कल्याणकारी एवं संसार में शांति स्थापित करने वाला है। जब यह विश्वास हो जायगा कि परमात्मा घट-घट व्यापी है, किसी को तकलीफ न देनी चाहिए, उस समय न तो किसी से लड़ाई होगी और न झगड़ा। उस समय सुख एवं शान्ति का राज्य होगा। मनुष्य का कल्याण इसी में है। केवल हिन्दू ही सनातनधर्म की महिमा को न समझें बल्कि मुसलमान, यहूदी तथा इसाई आदि अन्य मतावलम्बी भी उसके महत्त्व को समझें।

वर्ण-व्यवस्था

सनातनधर्म सबसे पुराना धर्म है। यह प्राणी मात्र के लिये है? मनुष्य मात्र के लिये है। इसमें और भी बहुत सी बातें हैं। वर्ण चार हैं। यह वर्ण व्यवस्था, जिसकी हँसी लोग उड़ाते हैं, बड़े महत्त्व की चीज है। बहुत से लोग इसकी महिमा को नहीं समझते। यह वर्णाश्रम धर्म ही है जिसकी बदौलत ऊँचे से ऊँचे ब्राह्माण पैदा हुए। उन्होंने अपने लिये यह धर्म समझा कि खेत में जो दाने बोए हुए हैं। उनको बटोर चुनकर भोजन करना। यह उन ऋषियों का आदर्श था। ब्राह्मणों ने अपने लिए तो धर्म का काम लिया-दान देना लेना, विद्या पढ़ना पढ़ाना तथा यज्ञ करना कराना। हमारे यहाँ तो लिखा है कि जो दान लेने के समर्थ हो वही दान ले। दूसरों के लिए इसकी निन्दा की है कि जो दान लेने के समर्थ हो वही दान ले। जो तपस्वी हो उसको दान देने की आज्ञा थी। यदि दूसरे को दान दिया जायगा तो फल नहीं मिलेगा। ब्राह्माण का शरीर सुख करने के लिये नहीं बल्कि इस जन्म में कठिन तपस्या करने के लिए तथा दूसरे जन्म में सुख भोगने के लिए है। जब तक ब्राह्मण इस पर कायम रहेगें, उनकी उन्नति होती रहेगी। वेदव्यास जी ने ब्राह्मणों के सामने यही उपदेश रक्खा कि माँगना नहीं। जो जंगल में मिल जाय वही भोजन करना। क्षत्रियों का कर्त्तव्य था कि जहाँ जरूरत पड़े वहाँ जान दें लेकिन मान को न जाने दें। वैश्य का धर्म था कि वेद-वेदांग पढ़े और व्यापार करते रहें। जब शूद्रों को वेद पढ़ने का अधिकार न था तो वेदव्यास जी ने चारों वेदों का अर्थ महाभारत में भर दिया ताकि सब प्राणी लाभ उठा सकें। स्त्रियों के लिये वेद पढ़ने की प्रथा बहुत पहले से बन्द थी पर ब्राह्मणी स्त्रियां वेद पढ़ सकती थीं।

पुराण, शूद्र और स्त्रियों के लिये थे। सुलभा और जनक के सम्वाद का जिक्र महाभारत में है। व्यासजी ने शुकदेवजी को पढ़ाया और ब्रह्म-ज्ञान समझने के लिये जनक के पास भेजा। दूसरी तरफ सुलभा को वेदव्यासजी जनक के पास भेजते हैं। सुलभा ने राजा जनक के साथ ऐसा विवाद किया कि संस्कृत में क्या किसी दूसरी भाषा में मैंने ऐसा नहीं पढ़ा और न सुना। वह सम्वाद इसलिये था कि मनुष्य के चोले में स्त्रियों पुरुषों में इस विषय में इस तरह विभिन्नता नहीं। जो ज्योति अपने ही भीतर है वह विधि की आँखों से दिखाई पड़ती है। वह स्त्री पुरुष में समान है।

वैश्य के लिये हमारे यहाँ लिखा है कि व्यापार करे। एक ब्राह्माण को जब अपनी विद्या का अभिमान हो गया तो उसे कहा गया कि तिलाधार से काशी जाकर धर्म सीखो। जब इसके पास जाकर ब्राह्माण ने दरियाफ्त किया और धर्म का तत्त्व पूछा तो वह जबाब देता है कि जिसको मैं सौदा देता हूँ, कम नहीं देता जिससे लेता हूँ, ज्यादा नहीं लेता। यह ईमानदारी वैश्य का धर्म है। यही वजह है कि वेदव्यास जी ने ब्राह्मण को वैश्य के पास भेजा। वेदव्यास जी का कथन है कि जो अच्छा काम करेगा वह अच्छा, जो बुरा करेगा वह बुरा होगा। अपने धर्म के अनुकूल काम करेगा, आदर पायेगा। जो बुरा करेगा, पतित होगा।

पद्मपुराण में मूक चाण्डाल की कथा है। भगवान् उसके घर के मंदिर में वास करते थे। जब एक ब्राह्मण ने पूछा तो जवाब में भगवान ने कहा कि यह माता पिता का भक्त है। उसकी भक्ति से प्रसन्न होकर मैं उसके घर में वास करता हूँ। वेदव्यास जी कह गये हैं कि चाण्डाल यदि नेकचलन हो तो वह भी सम्मान का पात्र है। किन्तु ब्राह्मण कभी सदाचार से गिर जाय तो वह आदर के योग्य नहीं। जानना चाहिए कि जैसा कर्म वैसी गति।

3. दिनचर्या

मालवीय जी प्रातः उषा-काल में उठ बैठते थे। प्रातः कृत्य से निवृत्त होकर वे शरीर में तेल की मालिश कराते थे- शुद्ध बादाम का तेल होता। उनका नौकर 'मूढ़ी' बड़े ढंग से मालिश किया करता था। मालिश के समय लंगोट पहन कर मालवीय जी जमीन पर शीतलपाटी बिछाकर लेट जाते थे। लगभग एक घन्टा मालिश होती। सारा शरीर जैसे सोने का बना हुआ था, ऐसी पवित्रता और ऐसी चमक अन्यत्र देखने में दुर्भ्भ ही है। उनकी क्रान्ति में स्निग्धता- चिकनाई थी जो देवतुल्य सी थी। वे प्रातः भ्रमण और व्यायाम नियमित रूप से करते।

मालिश के पश्चात् वे स्नान करते थे। वे देशी साबुन जो प्रायः हिन्दू विश्वविद्यालय का ही बना हुआ होता था उसे ही प्रयोग करते थे। स्नान के उपरान्त रेशमी पीताम्बर पहन कर संध्यावन्दन करते। उस समय उनके ललाट पर शुभ्र मलय चन्दन देखने वाले के मन-प्राण में शीतल आर्द्र-ज्योति बिखेरता था। संध्या करते समय वे सब कुछ भूलकर भगवान भक्ति में लीन हो जाते थे। परन्तु संध्या करते समय भी कोई दुखी व्यक्ति आ जाता तो उससे भी दो बातें कर लेते- कोई निराश नहीं लौट जाय, इसका वे ध्यान रखते थे। संध्यावन्दन के पश्चात् वे नियमपूर्वक श्रीमद्भागवत और महाभारत का स्वाध्याय करते और अपने प्रिय श्लोकों पर चिन्ह लगाते जाते।

संध्यावन्दन कर चुकने के बाद वे दुग्धपान करते - शुद्ध ताजा धारोषण दूध जिसके साथ आयुर्वेदिक दवाइयाँ भी होती थीं देते थे। जलपान आदि से निवृत्त हो वे अपने बंगले के गोल कमरे में आ जाते और मिलने वालों का तांता लग जाता। उस समय पीताम्बर उतार कर वे एक हल्का सफेद कुर्त्ता, धोती पहिने लेते थे और पीले खड़ाऊं पहने होते जिसके नीचे रबड़ की बेंदियां लगी होतीं। मालवीय जी ने जीवन में शायद ही कभी रंगीन वस्त्र धारण किया हो।

विश्वविद्यालय के कुलपति के नाते भी उन्हें जो 'गाऊन' पहनना होता वह भी सफेद रेशमी रहता। प्रायः एक दो बजे तक मिलने वालों का सिलसिला चलता रहता। इसी अवधि में गरीब-अमीर, राजनीतिज्ञ-विद्वान आदि से वे अच्छी प्रकार मुलाकात करते थे। उसके बाद वे भोजन के लिए उठ जाते।

उनका भोजन बहुत ही सदा व थोड़ा होता था। भोजन में वे कोई एक उबली हुई तरकारी जो बिना मसाले की होती लेते थे- फुलका 1 या 2 मक्खन व दूध। दूध और मक्खन तो उनका बाल्यावस्था से ही मुख्य आहार रहा है। भोजन के उपरान्त वे थोड़ा विश्राम करते और फिर स्वाध्याय। उनके कमरे में उनके पूज्य पिता जी और पूज्य माता जी के चित्र लगे हुए थे। पिताजी पीताम्बर ओढ़े कथा वांच रहे हैं, माता जी एक कुर्सी पर बैठी है, पैरों में कड़े हैं, शरीर पर सामान्य देहाती जेबर व सादा धोती। उन्हें प्रणाम करते, वन्दना करते और रात्रि में ईशोपासना कर निद्रा करते।

जब तक मालवीय जी महाराज रहे प्रतिवर्ष नियमपूर्वक बंसत पंचमी पर (विश्वविद्यालय स्थापना दिवस) वे दर्शन देते तथा अपना भाषण देते थे। उस समय उपस्थित सहस्त्र छात्र-छात्राएं, अध्यापक एवं अभिभावक मंत्र मुग्ध हो उनके प्रवचनों से ज्ञानार्जन कर अपने को धन्य मानते। इसके अतिरिक्त जब भी वे काशी में रहते तो एकादशी, जन्माष्टमी पर छात्रों व अध्यापकों को भागवत या महाभारत की कथा सुनाते। उनकी शैली बड़ी मर्म- स्पर्शी थी।

एक बार वह महाभारत से द्रौपदी की कथा सुना रहे थे एक-वस्त्रा- द्रोपदी अपने पतियों की ओर देखती है, दादा भीष्म की ओर देखती है, गुरु द्रोणाचार्य की ओर देखती है परन्तु किसी से कोई सहारा न पाकर श्री कृष्ण को पुकारती है- उस समय पूज्य मालवीय जी अश्रुपूर्ण, गद्गद् कण्ठ से ठीक अपने को द्रोपदी की स्थिति में रखकर श्लोक का साश्रु उच्चारण करते तो सभा में इतनी शान्ति व्याप जाती कि सूई भी गिरे तो उसकी आवाज मालूम हो जाय। वे हजारों की भीड़ में चार-चार, पाँच-पाँच घंटे तक बोलते रहते और जनसमुदाय उनकी कथा सुरुचि पूर्वक सुनता रहता। यह सच्चे अर्थ में उनके दिव्य पुनीत चरित्र का ही प्रताप था।

मालवीय जी कई भाषाओं के ज्ञाता व विद्वान थे। अंग्रेजी में, हिन्दी में, उर्दू में प्रवीण और संस्कृत में वे अत्यन्त प्रवीण थे। जब अंग्रेजी बोलते थे तो ऐसा लगता था कि कोई पूर्व जन्म का अंग्रेज बोल रहा है। उनकी हिन्दी इतनी परिष्कृत होती थी कि भाषण में एक भी उर्दू का शब्द नहीं आने देते थे। जब उर्दू बोलते थे तब खालिस उर्दू ही चलती थी कि मौलवी भी दंग रह जाते थे। परन्तु जब संस्कृत बोलते थे तो इतनी सरल, इतनी ललित होती कि पण्डित वर्ग भी विमुग्ध रह जाता था। इसके अतिरिक्त वे अपनी बोलचाल की पूर्वीय भाषा में भी घण्टे दो घण्टे तक इतना मनोरंजक इतना आकर्षक बोलते थे कि ग्रामीण जनता भी प्रमुदित हो उन्हें गाँव का व्यक्ति समझ बैठती। इसी प्रकार उनकी वाणी के अनुरुप ही उनकी लेखन शैली भी रही।

विश्वविद्यालय उनका स्वप्न था। उसके निर्माण के लिए उन्होंने महाराजा दरभंगा को साथ लेकर देश-भर का दौरा किया और करोड़ों रूपये एकत्रित किए। महात्मा गांधी महामना मालवीय को भारत का सबसे बड़ा भिखारी कहा करते थे। महात्मा गांधी तो पैसा-पैसा इकट्ठा करते रहे। पर महामना के कई ऐसे भक्त थे कि जितना चाहे लिखो, जितना चाहे खर्च करो। राजा-महाराजा लोग तो दान देते ही थे पर उनकी महारानियाँ भी महामना को खूब भेंट पूजा स्वेच्छा से करती रहीं। और ये दिव्यात्मा उस धन को सरस्वती के मन्दिर के लिए लगाता गया और स्वयं याचक बना रहा।

4. वचनामृत

पृथ्वी-मंडल पर जो वस्तु मुझको सबसे अधिक प्यारी है, वह धर्म है और वह धर्म, सनातनधर्म है।

यह शरीर परमात्मा का मन्दिर है। ईश्वर को सदैव अपने भीतर अनुभव करो और इस मन्दिर को कभी अपवित्र न होने दो। इस पवित्र मन्दिर का रक्षक ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य ही हमें वह आत्मबल देता है जिसके द्वारा हम संसार को जीत सकते हैं। आह्निक (डायरी) लिखने से मनुष्य को उन्नति में बहुत सहायता मिलती है। डायरी में अपना हृदय खोलकर रख दो। सभी कार्यों में शीलवान् बनो। शील ही से मनुष्य, मनुष्य बनता है। शीलं परं भूषणम्- शील ही पुरुष का सबसे उत्तम भूषण है।

पढ़ते समय सारी दुनिया को एक ओर रख दो और पुस्तकों में, लेखक की विचारधारा में डूब जाओ। यही तुम्हारी समाधि है, यही तुम्हारी उपासना है और यही तुम्हारी पूजा है। हिन्दू विश्वविद्यालय की संस्थापना विद्यार्थी के भीतर शारीरिक बल के साथ धर्म की ज्योति और ज्ञान का बल भरने के लिए हुई है, इसे सदैव स्मरण रखो। हिन्दी भाषा को यदि मैं आप के सामने यह कह दूं कि यही सब बहिनों में मां की अच्छी पहली पुत्री है, अपने माता और पिता की होनहार मूर्ति है, तो अत्युक्ति न होगी।

जब हिन्दी का सब बहनों से सम्बन्ध है, और ऐसी जब यह बड़ी बहन है, तब इसको मानकर यदि प्रान्त-प्रान्त की भाषाओं का सेवन किया जाय तो बहुत ही उपकार होगा। जहाँ तक हो हिन्दी में हिन्दी ही रखी जाय। बिजली की रोशनी से रात्रि का कुछ अन्धकार दूर हो सकता है, किन्तु सूर्य का काम बिजली नहीं कर सकती। इसी भाँति हम विदेशी भाषा के द्वारा सूर्य का प्रकाश नहीं कर सकते। साहित्य और देश की उन्नति अपने देश की भाषा से ही हो सकती है।

आपका भारत धर्मप्रधान देश है। इसके चारों कोनों पर चार धाम है। अब आप ही सोचिये कि धार्मिक सम्बन्ध से सारे भारत वर्ष में कौन सी भाषा से काम चल सकता है। मेरी समझ में इसके लिए हिन्दी का ज्ञान बहुत आवश्यक है।

हमारे देश के भाइयों के मरने जीने का न्याय हो, पर हो वह दूसरी भाषा में, यह कैसे आश्चर्य की बात है? वास्तव में न्याय उस भाषा में होना चाहिए जिसका एक-एक शब्द उसकी समझ में आता हो, जिसका कि न्याय हो रहा है। देवनागरी अक्षर संसार के सब अक्षरों से अधिक सरल और स्पष्ट हैं।

''न च मातृ समो गुरू:'' पिता से दस गुणा दर्जा माता का है। इतना उन्हें पढ़ा दो कि बच्चों को वह अपनी मातृभाषा में गुणा-भाग सिखा सकें। सौ श्लोक अथवा दोहों के रत्नों की माला पहनाकर स्कूल में भेजें कि गुरु कह दें कि यह किस बड़भागिनी की कोख का बच्चा है?

मैं तो रेल में चलता हूँ और सन्ध्या का समय आने पर संध्या कर लेता हूँ। आप उन्हीं वस्तुओं को खरीदिये जिसके खरीदने से अपने गरीब भाइयों को कुछ पैसा मिले। आज भारत-सन्तान ''वार आफ रोजेज'' पढ़ते हैं, अपने गौरव तथा इतिहास की चिन्ता नहीं करते। सृष्टि में जितनी जातियों का इतिहास मिला है उनमें यह हिन्दू जाति सबसे प्राचीन है।

यदि प्राचीनता से ही प्रेम है तो यह प्राचीन अवश्य है। किन्तु कोई केवल प्राचीनता के लिए आदर नहीं पा सकता।'यह प्रेम के योग्य है', इस बात पर इसका आदर हो सकता है।

पीपल के वृक्ष की तरह हिन्दू सभ्यता की जड़ बहुत गहरी ओर बहुत दूर तक फैली है। **शेष पृष्ठ 5 पर ...**

दैनिक जीवन में रसायन विज्ञान की भूमिका

रसायन विज्ञान, विज्ञान की वह शाखा है जो रचना, संरचना, गुण, प्रतिक्रियाओं और पदार्थों के अध्ययन से संबंधित है। इसलिए रसायन शास्त्र केंद्रीय विज्ञान के रूप में करार दिया गया है। यह हमारे दैनिक जीवन का सार है। रसायन शास्त्र दैनिक जीवन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हमारे दैनिक जीवन की शुरु आत अक्सर साबुन, टूथपेस्ट, शैम्पू, आदि जैसे रासायनिक उत्पादों से होती है। रोजमर्रा में हम जो खाना खाते हैं, हवा में सांस लेते हैं, पानी पीते हैं, सब कुछ रासायनिक प्रक्रियाओं का ही परिणाम है। प्यार, नफरत जैसी भावनाएँ भी रसायन शास्त्र द्वारा ही संचालित हैं। हमारे आसपास लगभग हर जगह रसायन शास्त्र विद्यमान है। रसायन शास्त्र की उपयोगिता के लिए इसे दो वर्गों में विभाजित किया है-

1. हमारे भीतर रसायन विज्ञान
2. हमारे चारों तरफ रसायन विज्ञान

1. हमारे भीतर रसायन शास्त्र:-

रसायन शास्त्र हमारे अस्तित्व में एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। रसायनों के बिना जीवन जीने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। वे शरीर की प्राथमिक क्रियाओं में भाग लेते हैं। हमारी भावनाओं पर नियंत्रण चयापचय की प्रक्रिया की देखरेख, हमारे शरीर की संरचना, आनुवंशिक DNA और RNA सभी विभिन्न तत्वों और यौगिकों से बने होते हैं। हमारे शरीर के अंदर भी रसायन शास्त्र विद्यमान है। कुछ उदाहरण निम्न हैं-

(i) मानव शरीर की संरचना:-

हमारे शरीर का द्रव्यमान लगभग 96% भाग सिर्फ 4 तत्वों से बना है- आक्सीजन, कार्बन, हाइड्रोजन और नाइट्रोजन। इन्हें स्थूल पोषक तत्व कहते हैं। शेष 3 सोडियम, पोटेशियम,कैल्शियम, जिंक आदि शामिल हैं। ये सभी तत्व हमारे जीवन यापन के लिए आवश्यक हैं, जिन्हें सूक्ष्म पोषक तत्व कहते हैं। मानव शरीर में मौजूद पानी और अन्य जैविक उत्पाद जैसे कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, रिपिड और न्यूक्लिक एसिड सभी रासायनिक यौगिक हैं।

(ii) चयापचय:-

मानव शरीर में विभिन्न जैविक, रासायनिक प्रतिक्रियाओं की बड़ी संख्या शामिल है। चयापचय की प्रक्रिया में विभिन्न अंगों द्वारा एन्जाइम व हॉर्मोन स्रावित किए जाते हैं। जो पाचन की पूरी क्रिया की गति और समय को नियमित करते हैं। हमारे पाचन की पूरी प्रक्रिया का सुचारू रूप से संचालन और सामान्य स्वास्थ्य रासायनिक क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं के सहसंयोजन का ही परिणाम है।

(iii) श्वसन:-

जीव और वातावरण के बीच गैसों के आदान प्रदान को श्वसन कहते हैं। श्वसन ऑक्सीजन और ग्लूकोज के बीच की एक प्रतिक्रिया है जो कि एक रासायनिक प्रक्रिया है, जो ऊर्जा मुक्त करती है।

जो कि निम्नलिखित है-

$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \rightarrow 6O_2 + 6H_2O + Energy$

(iv) जल की संरचना:-

जल एक रासायन है जो हम हर रोज पीते हैं। पानी हमारे शरीर के अंदर होने वाले सभी चयापचय की प्रक्रिया के लिए महत्वपूर्ण है। पानी तो पृथ्वी पर अमृत है। पानी का रासायनिक सूत्र H_2O होता है।

(v) पाचन:-

गैस्ट्रिक अक्ल पाचन की पूर्ण प्रक्रिया में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो कि विभिन्न रसायनों से मिलकर बनता है। गैस्ट्रिक एसिड पेट में प्रोटीन की अप्राकृतिकरण के लिए जिम्मेदार है जो कि पेप्सिन को पेप्सिनोजन में बदलने में बदलने में मदद करता है।

(vi) भावनाओं के रसायन:-

मानविक भावनाएँ जैसे आँसू और रोना प्रोलैक्टिन के स्राव से प्रभावित रहते हैं। जिसमें मैगनीज होता है। प्रोलैक्टिन दूध उत्पादन को भी नियंत्रित करता है। प्यार और आकर्षण को भावना हार्मोन टेस्टोस्टेरोन और एस्ट्रोजन के स्राव में वृद्धि के कारण पनपती है। ये हमारे शरीर के अंदर रसायन शास्त्र के कुछ उदाहरण हैं, हमारे आसपास की कैमिस्ट्री के उदाहरण निम्न हैं-

2. हमारे चारों तरफ की कैमिस्ट्री-

रासानियनिक प्रतिक्रियाएँ हमारे चारों ओर के सामान को प्रभावित करतीं हैं। रसायन और रसायन शास्त्र हमें एक बेहतर जीवन जीने में मदद करते हैं।

भोजन कपड़े, घरों के निर्माण के लिए इस्तेमाल की जाने वाली वस्तुएँ, बिजली उत्पादन, कृषि में उपयोग होने वाले उर्वरक सब रसायन शास्त्र के उपयोग से संभव है। इस शास्त्र पर मानव निर्भरता बढ़ती जा रही है और हमारे आसपास के कुछ उदाहरण निम्न हैं-

(i) प्रकाश संश्लेषण :-

प्रकाश संश्लेषण एक रासायनिक प्रक्रिया है जिसमें पौधों,शैवाल और कुछ बैक्टीरिया द्वारा अपने स्वयं के भोजन का उत्पादन करते हैं। इस प्रक्रिया में पत्तियों मौजूद क्लोरोफिल द्वारा सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में कार्बन डाइऑक्साइड और पानी का उपयोग करके ग्लूकोज का संश्लेषण। होता है, जो कि प्रतिक्रिया के रूप में दिखाया गया है-

$6CO_2 + 6H_2O \xrightarrow[\text{ऊर्जा}]{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6O_2$

(ii) दाग हटाने में :-

साबुन एक क्षार और एक फैटी एसिड के बीच प्रतिक्रिया द्वारा बनाया जाता है। इसके दो सिरे होते हैं- हाइड्रोफिलिक और लारपोफिलिक। लाइपोफिलिक सिरे से तेल या मिट्टी चिपक जाती हैं और हाइड्रोफिलिक सिरा पानी के साथ अभिक्रिया करके धीरे-धीरे सतह छोड़ता है। और फिर पानी के धारा के साथ धुल जाते हैं। शरीर और कपड़ों पर जमा मैल इसी प्रक्रिया से साफ किए जाते हैं।

(iii) स्वास्थ्य देखभाल और सौंदर्य:-

रसायन शास्त्र प्रायोगशालाओं, चिकित्सा नुस्खे, गोलियाँ, टीके में किए गए नैदानिक परीक्षण, एंटीवायोटिक दवाओं के स्वास्थ्य की निगरानी, रोगों के नियंत्रण में और मानवता की पीड़ा को समाप्त करने में बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सही जन्म नियंत्रण से जीवन की वृद्धि करने की प्रत्याशा सभी रसायन विज्ञान का स्पष्ट सेवाओं का उपयोग संभव बना दिया गया हैं। कीमोथैरेपी और जीनोम अनुक्रमण के लिए एंटीसैप्टिक समाधान सब रसायन शास्त्र का ही उपयोग है। अधिकांश सौंदर्य उत्पाद खाल का पोषण करते हैं। सारी प्रक्रिया रासायनिक संश्लेषण के माध्यम से उत्पादित होती है। परंतु उनमें उपस्थित कुछ तत्व लंबे समय के उपयोग की वजह सक त्वचा के लिए खतरनाक हैं।

(iv) उद्योग और परिवहन:-

कपड़ा मिलों, साबुन का झाग कारखानों, पेट्रो रसायन उद्योगों तथा रिफाइनरियों में उपयोग में लिए जाने वालों रसायन ही होते हैं। रसायन की गुणवत्ता में सुधार और प्रदूषण उत्पादन के लिए जिम्मेदार हैं। सभी उद्योगों में बिजली उत्पादन, उत्पाद प्रसंस्करण के लिए रसायन शास्त्र ही मदद करता है। उद्योगों द्वारा उत्पन्न प्रदूषण के खतरनाक प्रभाव को बेअसर या नियंत्रित करने के लिए रसायनों का ही उपयोग होता है।

विमानन और शिपिंग उद्योग ईधन जलाकर रासायनिक अभिक्रिया करके ऊर्जा उत्पन्न करते हैं।

कुछ हमारे दिन भर के क्रियाओं के उदाहरण हैं जैसे- सैलफोन और लैपटॉप के कामकाज में बैटरी का उपयोग दहन प्रतिक्रियाओं से रिलीज ऊर्जा, घरों में सफाई के लिए उपकरण, फलों के रस की अम्लता, फलों के पकाने की प्रक्रिया, भोजन पकाने में गैस का उपयोग, कपड़ों को रंगाने की प्रक्रिया आदि सभी क्रियाओं में यौगिकों के ताप और उपयोग के संयोजन का ही परिणाम है।

रसायन शास्त्र कई सकारात्मक क्षेत्रों से जुड़ा हुआ हैं उदाहरण के लिए जैसे ऊर्जा के क्षेत्र में, स्वास्थ्य और सौंदर्य प्रसाधन उद्योग और परिवहन के क्षेत्र में नए स्रोतों के विकास में, चिकित्सा और उपचार के विकास में आदि।

साथ ही रसायन विज्ञान कई नकारात्मक तत्वों जैसे प्रदूषण, जोखिम और खतरे के साथ भी सम्मिलित है।

- शुचि माहेश्वरी
शोधार्थी, रसायन शास्त्र विभाग

आशियां बनालें हम

आ मिल के एक आशियां बनाले हम,
कुछ धूप तेरे आंगन की,
कुछ छांव मेरे आंगन की,
एक सुबह तेरे ख्यालों से,
एक शाम मेरे ख्यालों से,
नींव होगी विश्वास की,
दीवारों के कान नहीं होंगे,
हर दीप उजाला करेगा प्रेम का,
घर की दहलीज बनेगी त्याग से,
हर समस्या का बंटवारा होगा,
चल खड़ा करें एक घर समर्पण का स्पर्श,
स्नेह की खुशबू से महके जो हरदम,
आ मिल के एक आशियां बनाले हम

- दिवांशु गोयल 'स्पर्श'

मैं तो निर्जीव हूँ।

बूढ़ा हो चला हूँ मैं,
पत्तो की रंगत बदलने लगी है,
खड़े रहने की ताकत अब मुझमें नहीं,
खड़ा रहता हूँ मगर,
शायद कोई छाँव के लिए पूछ ले।
शाख भी कमजोर सी पड़ती हैं,
दरारों से भर गयी हैं,
खड़ा रहता हूँ मगर,
शायद कभी बिटिया झूला डाल ले।
मेरा बचपन एक आँगन में गुजरा,
सब बडा प्यार करते थे,
तीन बच्चों में सबसे बड़ा था मैं,
आज सब दूर हो गए,
खड़ा रहता हूँ, मगर,
शायद कोई प्यार से गले लगा ले।
एक दंश विभाजन का ऐसा भी झेला,
वो घर छोड विदा हुए सब,
कुछ इस पार कुछ उस पार,
अब कोई नहीं मेरे साथ खेलने को,
जड़ें भी बेहद कमजोर हो चली हैं,
खडा रहता हूँ मगर,
शायद कोई मेरा मोल पूछ ले,
और खडा रहूँगा मरते दम तक,
शायद तुम्हें मेरी जरूरत हो,
साथ नहीं छोड़ूंगा तुम्हारा,
क्योंकि मैं इंसान नहीं 'स्पर्श'
मैं तो निर्जीव हूँ।

-दिवांशु गोयल 'स्पर्श'

भारत के आध्यात्मिक राजदूत एवं लेखकः श्रील प्रभुपाद

(एक अद्भूत व्यक्तित्व)

भक्तिविनोद ठाकुर (गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के एक आचार्य) ने 1875 में यह भविष्यवाणी की कि ''जल्दी ही कोई आयेगा और इस कृष्णभावनामृत का प्रचार संपूर्ण विश्व में करेगा।''

अभय चरण डे (जो कि श्रील प्रभुपाद के रूप में विश्वभर में विख्यात हैं) का जन्म नन्दोत्सव (1 सितंबर, 1896) के शुभ दिन कलकत्ता के एक वैष्णव परिवार में हुआ। उनके पिता का नाम गौर मोहन डे एवं माता का नाम श्रीमती रजनी डे था। उनके पिता ने उनका नाम अभय चरण (जो निडर हो एवं जिसने भगवान् के चरण कमलों की शरण ले रखी हो) रखा, चूँकि उनका जन्म नन्दोत्सव के शुभ दिन हुआ था इसलिए सभी प्यार से उन्हें नन्द-दुलाल भी बुलाते थे। बंगाली परम्परा के अनुसार उनके माता-पिता ने उनकी जन्म कुण्डली ज्योतिषी को भविष्य वाचन के लिए दी। ज्योतिषी ने बालक की कुण्डली देखकर यह कहा कि ''इस बालक में बहुत ही शुभ लक्षण हैं और जब यह बालक 70 वर्ष का होगा, तब समुद्र पार जाएगा, यह एक महान धर्म प्रचारक होगा और सैकड़ों मन्दिरों की स्थापना करेगा।''

उनके पिता शुद्ध वैष्णव थे और उन्होंने अपने पुत्र का पालन-पोषण इस तरह किया कि वह भी कृष्णभक्त ही बने। डे परिवार का निवास स्थान हैरिसन रोड़, कलकत्ता (कोलकाता) में था। वहाँ पर सड़क के दूसरी ओर राधा-गोविन्द का मन्दिर था। अभय चरण प्रतिदिन अपने माता-पिता के साथ मन्दिर जाते एवं राधा-गोविन्द के दर्शन करते तथा घण्टों उनकी स्तुति करते रहते।

जगन्नाथ पुरी (उड़ीसा) में प्रतिवर्ष भगवान श्री जगन्नाथ बलदेव एवं सुभद्रा मैया की रथयात्रा निकाली जाती है जिसमें लाखों भक्त इन रथों को श्री मन्दिर से खींचकर गुण्डिचा मन्दिर तक ले जाते हैं। बालक अभय ने सुन रखा था कि किस प्रकार भगवान श्री चैतन्य महाप्रभु ने स्वयं पुरी रथयात्रा के अवसर पर भाव-विभोर होकर भगवान के समक्ष नृत्य किया था। अभय चरण भगवान जगन्नाथ के रथ यात्रा समारोह के प्रति अत्यधिक अनुरक्त हो गये थे। अभय चाहते थे कि उनके पास निजी रथ हो जिससे वे स्वयं रथ हो जिससे वे स्वयं रथ यात्रा निकाल सकें। अतः उनके पिता ने उनके लिए तीन फुट ऊँचा एक रथ खरीद कर दिया। पिता-पुत्र दोनों ने मिलकर इस रथ के आधार स्तम्भ बनाए एवं उसे छतरी लगाकर सजाया। उनकी बहन भवतारिणी व पड़ोस की माताओं ने रथयात्रा के लिए प्रसाद बनाकर उनका सहयोग किया। उनके द्वारा निकाली जाने वाली यह यात्रा 8 दिन तक चली।

जब अभय चरण 6 वर्ष के थे तब उन्होंने पिता से पूजा हेतु श्री विग्रह माँगे। पिता गौर मोहन डे ने उनके आग्रह पर उन्हें राधा-कृष्ण के अर्चा-विग्रह प्रदान किये और बालक अभय नियमित रूप से अपने पिता व पुजारी का अनुकरण करते हुए उन अर्चा - विग्रहों की सेवा करने लगे। (बाद में उन्होंने विदेशों में 100 से अधिक इस्कॉन मन्दिर में राधा-कृष्ण के अर्चविग्रह स्थापित किये जिसकी नींव बचपन में उनके पिता ने डाल दी थी।)

जब वे बड़े हुए तब उनके माता-पिता ने उन्हें पढ़ने के लिए कलकत्ता (कोलकाता) के प्रसिद्ध स्कॉटिश चर्च कॉलेज में भेजा। वह बहुत ही बड़ा कॉलेज था एवं बंगाल के लोगों में बहुत ही प्रसिद्ध था। कॉलेज में पढ़ाई के दौरान वे अंग्रेजी समाज एवं संस्कृत समाज, दोनों के ही सदस्य थे। अभय चरण को गांधी जी की सादगी व गीता में उनकी निष्ठा ने उन्हें काफी प्रभावित किया इसलिए वे कॉलेज में पढ़ाई के दौरान ही गांधी जी के राष्ट्रवादी अभियान के समर्थक बन गए। उन्होंने 1920 में अच्छे अंकों से उत्तीर्ण होने के बावजूद अपनी डिग्री लने से भी इंकार कर दिया और गांधी जी के असहयोग आंदोलन से जुड़ गये। महाविद्यालय की शिक्षा के दौरान ही अभय के पिता ने उनका विवाह उस महाविद्यालय के अध्यक्ष की पुत्री राधा रानी दत्त के साथ कर दिया। उनके पिता ने अपने मित्र के माध्यम से अभय चरण को डॉ. बोस की प्रयोगशाला में प्रबंधक की नौकरी दिलवा दी।

अभय चरण सर्वप्रथम 1922 में अपने गुरु श्रील भक्ति सिद्धांत सरस्वती महाराज के सम्पर्क में आये। उनके गुरु ने उन्हें भगवान चैतन्य के संदेश को संपूर्ण विश्व में प्रचारित करने के लिए कहा। भगवान चैतन्य की शिक्षाएं किसी धर्म या राष्ट्र के लिए न होकर विश्व भर के समस्त संभ्रान्त लोगों के लिए हैं। कृष्ण ही पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान हैं एवं श्रील प्रभुपाद ने उनके पवित्र नाम ''हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे, हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे'' के कीर्तन पर अधिक बल दिया। बाद में 1932 में जब वे दूसरी बार अपने गुरु श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती महाराज से मिले तो उन्होंने औपचारिक रूप से दीक्षा ग्रहण की और भक्ति सिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के शिष्य बनकर 30 वर्ष तक भारत में कृष्णभावनामृत का प्रचार किया।

सन् 1935 में अपने गुरु श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती गोस्वामी महाराज की 62वीं जन्मतिथि पर अभय चरण ने मुम्बई में अपने गुरुभाई की बैठक में एक कविता और निबन्ध प्रस्तुत किया, जिसे बहुत सराहा गया और बाद में इसे गौड़ीय-मठ की पत्रिका हार्मोनिस्ट में प्रकाशित किया गया। जब यह कविता भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर के पास पहुँची तो वे बहुत खुश हुए।

1935 में ही जब श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती ठाकुर वृन्दावन में थे तो उन्होंने अभय से कहा कि 'मेरी इच्छा कुछ पुस्तकें छापने की है, यदि तुम्हें कभी धन प्राप्त हो तो उस धन से तुम पुस्तकें छापना।' 1944 में श्रील प्रभुपाद ने अपने गुरु श्रील भक्तिसिद्धान्त गोस्वामी महाराज के प्रत्यक्ष आदेश से ''बैक टू गॉडहैड'' (श्री अभयचरण डे के द्वारा संपादित एवं संस्थापित नामक मासिक पत्रिका भी शुरू की। पत्रिका के डिजायनर, प्रकाशक, संपादक एवं वितरक वे स्वयं ही थे। उन्हें अपनी पत्रिका की छपाई हेतु कागज लेने के लिए सरकारी अधिकारियों को बार-बार विनती करनी पड़ती थी। यद्यपि वे अकेले थे एवं उन्हें सहारा देने वाला भी कोई नहीं था तथापि उन्हें अपने गुरु तथा भगवान् श्री कृष्ण पर पूर्ण विश्वास था।) अतः तृतीय विश्वयुद्ध की भयावह परिस्थितियों के दौरान भी उन्होंने अपनी पत्रिका के प्रथम अंक का विमोचन किया क्योंकि इस तरह के साहित्य की उस समय नितान्त आवश्यकता थी।

वे ''बैक टू गॉडहैड'' के प्रूफ पढ़ने के लिए मुद्रक के यहाँ नित्य ही चल कर जाते। जब मुद्रक ने पूछा कि इतनी कठिनाइयाँ होने पर भी वे इस समाचार - पत्रिका को निकालने पर क्यों तुले हैं, तो उन्होंने जवाब दिया ''यही मेरे जीवन का लक्ष्य है।''

अभय चरण के गुरु श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती महाराज

शेष पृष्ठ 7 पर...

महामना मालवीय का हिन्दी भाषा के उत्थान में योगदान

भारतवर्षा में 19वी शताब्दी में इस देश के लिए वरदान बनकर आई जब देश ने अनेक ऐसे सपूत पैदा किए जिनके प्रयासों से ही सदियों से गुलामी का अभिशाप झेल रहा यह राष्ट्र पुन: आत्म सम्मान के साथ जीने के सपने को साकार करता 15अगस्त 1947 से स्वतंत्र राज्य का गौरव प्राप्त कर सका देश के इन महान सपूतों में 25 दिसम्बर1861 को जन्में पं० मदन मोहन मालवीय का नाम भी जुड़ा हुआ हैं. फिर भी कुछ हद तक इसे एक विडम्बना ही मानना चाहिए कि इस देश में उसका नाम अधिकांश लोग उन्हे 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' के संस्थापक तथा एक महान शिक्षाविद के रूपमें ही जानते हैं शिक्षा के अतिरिक्त मालवीयजी एक महान देश भक्त, राजनेता, अद्भूत् वक्ता, सुविख्यात निर्भीक पत्रकार, समाज सुधारक, हिन्दी के सबसे बड़े प्रवर्तक तथा पौषक, अपने समय के प्रयाग उच्चन्यायालय के दीर्घा के एक सफलतम अधिवक्ता, आर्थिक सुधारों के प्रखर चिन्तक तथा अत्यंत कोमल हृदय वाले संवेदनशील मृदुभाषी आदर्श आचरण के व्यक्तित्व के धनी महानुभाव थे जिसकी वजह से उन्हे 'महामना' कहा गया उन्होने कभी भी तुच्छ वस्तुओं की इच्छा नहीं की और न ही कभी तुच्छ भावनाओं को मन में स्थान दिया। उन्हे अपने द्वारा किसी भी किए गए महत्वपूर्ण अथवा अच्छे कार्यों की अन्य लोगों को जानकारी हो इसका प्रयास करना तो दूर उन्होने उल्टा यह तरीका अपनाया था कि उनके द्वारा किए गए व पूरे कर दिए हुए सद्कार्यों का कोई प्रचार न करे अपने द्वारा संपादित कार्य वह किसी अपने विश्वास पात्र व्यक्ति को सौपकर अन्य नए कार्य को उन्मुख हो जाते थे उनके नाम का उल्लेख कही न हो इस बात पर वह इतना बल देते थे कि उन्होने अपने बनाए अपने घर के बाहर भी अपना नाम कभी नही लिखवाया।

अन्य सभी क्षेत्रों में उनके योगदान के विषय मे देशवासियों को अधिक जानकारी नही है इस लेख के माध्यम से हिन्दी के लिए की गई उनकी अथक सेवा से जन मानस को परिचित कराने का प्रयास किया जा रहा है जिससे चह पता चले कि यदि महामना न हुए होने तो क्या आज हिन्दी जिस उच्च पद की अधिकारिणी हुई है उस पद को पाने में वह सफल भी हो पाती ?

महामना के हिन्दी-प्रेम की चर्चा के पूर्व यह उल्लेख करना असंगत ने होगा कि उनका हिन्दी के प्रति समर्पण किसी विवशता या असमर्थता के कारण नहीं था। महामना संस्कृत तथा हिन्दी भाषा में भी धाराप्रवाह व्याख्यान करने में प्रवीण थे। अंग्रेजी पर तो उनका ऐसा अधिकार था कि कांग्रेस वर्किंग कमेटी तथा उस समय के भारतवर्ष के ख्याति प्राप्त अंग्रेजी भाषा के मर्मज्ञ नेतागण भी यदि कोई प्रत्यावेदन आदि ब्रिटिश हुकूमत को अंग्रेजी में भेजना होता था तो उसकी अंग्रेजी भाषा के परिमार्जन के लिए उस आलेख को महामना के पास इस आशय से भेज देते थे कि वह उस आलेख की भाषा में यदि कोई संशोधन करना चाहें तो उसे कर दें। राउन्ड टेबल कॉन्फरेंस में जब महामना लंदन गए तो वहाँ के अग्रेज नेता यह मानने को तैयार नहीं होते थे कि महामना ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में नहीं पढ़े हुए हैं क्योंकि उन्हे लगता था कि महामना जिस तरह की विशुद्ध अंग्रेजी जिस प्रकार से बोलते हैं वैसी अंग्रेजी केवल ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय के पढ़े छात्र ही बोल पाते थे यह तो महामना का देश-प्रेम व हिन्दी के प्रति उनकी अटूट निष्ठा थी कि उन्होने हिन्दी इस देश की राष्ट्रभाषा तथा राज्यभाषा बने इसके लिए संकल्प बद्ध होकर हिन्दी की पैरवी व उसके प्रचार प्रसार के लिए अपना अप्रतिम योगदान दिया...

19वीं शताब्दी में भारतीय जनमानस में पराधीनता की कचोट से स्वतंत्रता की ललक जाग उठी थी। ''सिंहासन हिल उठे राजवंशों ने भृकुटी तानी थी, बूढ़े भारत में आयी फिर से नई जवानी थी, गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी, दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी'' चरितार्थ हो उठा था। ऐसे वातावरण में इस प्रान्त के बुद्धिजीवियों के लिए यह भी बर्दाशत करना असम्भव होने लगा था कि यहां की सुसस्कृत तथा समृद्ध भाषा हिन्दी होते हुए भी पराधीन होने के कारण प्रदेश की जनता को समस्त राजकीय कार्यो में विदेशी भाषा फारसी अथवा अंग्रेजी का ही प्रयोग करना पड़ता था। फलत: 19वीं शताब्दी के मध्य तक आते आते अनेक स्वाभिमानी देशभक्त बुद्धिजीवियों ने इस बात का बीडा उठाया कि प्रदेश में विदेशी भाषा की जगह ''निज भाषा'' के प्रयोग की भाषकीय अनुमति मिल जाये। इस कड़ी में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रयोग राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द द्वारा भी सन्1868 में किया गया जो उपरोक्त विदेशी लिपियों के हिमायतियों के विरोध के कारण सफल न हो सका।

सन् 1884 ई० में ''हिन्दी-उद्धारिणी-मध्य- सभा'' प्रयाग में खुली, जिसका उद्देश्य नागरिकों को उसका अधिकार दिलाना था। मालवीय जी ने इसमें जी खोलकर काम किया, व्याख्यान दिये, लेख लिखे और अपने मित्रों को भी इस काम में भाग लेने के लिए उत्प्रेरित किया। उन्होने इस सम्बन्ध में विवेचना द्वारा यह जाना कि सन् 1868 ई० में राजा शिव प्रसाद सितारे हिन्द ने कचहरियों में नागरी के प्रवेश के लिए प्रयत्न किया था किन्तु उनको सफलता न मिली। उन्ही की भाँति बहुतों ने जब तब छिटपुट यत्न किया, पर सभी असफल रहे। अन्त में महामना पंडित मदन मोहन मालवीय मैदान में आये और एक अत्यन्त व्यवस्थित ढंग से उन्होने इस काम को हाथ में लिया। एक ओर तो उन्होंने नागरी के पक्ष में हस्ताक्षरों की योजना प्रारम्भ की तो दूसरी ओर बहुत सी सामग्री संचित कर ''कोर्ट कैरेक्टर एण्ड प्राइमरी एज्युकेशन'' नाम की पुस्तक लिखी जिससे हिन्दी का प्रयोग सरकारी कामकाज में क्यों किया जाए इसकी प्रचुर सामग्री थी।

जब मालवीय जी नागरी प्रचार आन्दोलन के मुखिया बने तब नागरी के सबसे बड़े विरोधी सर सैयद अहमद समाधि में गहरी नींद ले रहे थे, पर मोहसुनुल मुल्क ने नागरी के विरूद्ध घनघोर आन्दोलन शुरु कर दिया। जान पड़ा कि बेचारी नागरी यूं ही पडी रह जायेगी। लीर्ड कर्जन की सरकार भी उनकी ओर झुकी जा रही थी पर मालवीय जी से लोहा लेना भी जरा टेढ़ी खीर थी। दिन रात एक करके अपनी वकालत के सुनहरे दिनों में धुन के साथ मालवीय जी ने गहरी छानबीन के साथ नागरी के पक्ष में प्रमाण और आंकड़े इकट्ठे किये। सैकड़ों जगह डेपुटेशन भेजे गये और हिन्दी भाषा और नागरी लिपि की सुन्दरता और उपयोगिता दिखलाई गई। मालवीय जी ने वकालत करते हुए भी अपने मित्र पंडित श्री कृष्ण जी जोशी के साथ मिलकर घोर परिश्रम किया। अपने पास से रूपया खर्च करके उपरोक्त कोर्ट लिपि का इतिहास, प्राचीन अधिकारियों की सम्मतियां एकत्र करके एक बड़ा सुन्दर उपरोक्त पुस्तक ''कोर्ट कैरेक्टर एण्ड प्राइमरी एज्युकेशन इन नार्थ वेर्स्टन प्रौविन्सेज'' लिखी। यह अभ्यर्थना-लेख लेकर 2 मार्च सन्1898 ई० को अयोध्या नरेश महाराजा प्रताप नारायण सिंह, मांडा के राजा राम प्रसाद सिंह आवागढ़ के राजा बलवन्त सिंह, डॉक्टर सुन्दर लाल आदि के साथ मालवीय जी का एक दल दिन के 12 बजे गर्वन्मेन्ट हाउस प्रयाग में छोटे लाट सर एन्टोनी मेक्डॉलेन के साथ मिला। मालवीय जी की मेहनत सफल हो गयी। उनकी सब बातें मान ली गयीं। अन्त में 18 अप्रैल सन् 1900 ई. को सर ए.पी. मैक्डॉलेन ने एक विज्ञप्ति(गर्वन्मेन्ट गजट) निकाल दिया जिससे कचहरियों में तथा भाषकीय कार्यों में नागरी को भी स्थान मिल गया। लेकिन देश के हिन्दी विरोधी लोगों ने इस पर ऐसा उधम मचाया कि एक बार पुन: हिन्दी डगमगाती दिखी जगह-जगह पर सभायें की गईं तथा जगह-जगह से प्रस्तावों के बौछार आये कि हिन्दी को इस प्रकार स्वीकार न किया जाये पर मालवीय जी अपने मिशन में जुटे रहे। फलत: लाट साहब तनिक भी विचलित न हुए और अन्त में बडे लाट साहब की अनुमति से यह आईन बन गया कि सभी लोग अपनी अर्जी शिकायत की दरखास्त चाहे हिन्दी या फारसी में दे सकते हैं और सभी कागजात जैसे सम्मन आदि जो सरकार की ओर से जनता के लिए निकाले जायेंगें वह दोनों लिपियों यानी नागरी और फारसी लिपि में लिखे अथवा भरे होंगे। सरकार ने इसके साथ ही इस बात का भी ऐलान कर दिया कि आगे किसी भी व्यक्ति को तभी सरकारी नौकरी मिल सकेगी जब वह हिन्दी भाषा का भी जानकार हो और जो कर्मचारी अभी हिन्दी नहीं जानते हैं वर्ष भर में वे उसे अवश्य सीख लें अन्यथा वह नौकरी से अलग कर दिये जायेंगें।

महामना मावलीय जी द्वारा अपने ही देश मे विदेशी भाषाओं के स्थान पर नागरी को अपना समुचित स्थान दिलाने के इस प्रयास से ही हिन्दी का प्रचलन अपने प्रदेश में आरम्भ हुआ अन्यथा हिन्दी को अपने घर में भी कब तक विदेशी भाषाओं के बोझ के तले दबे रहना पड़ता आज की तारीख में इसका अनुमान लगाना भी कठिन है।

इस समय के संयुक्त प्रान्त (आज के उत्तर प्रदेश) में हिन्दी को भी राजभाषा का दर्जा दिला देने के पहले से ही महामना वर्ष 1886 ई० से कांग्रेस से जुड़कर देश की राजनीति में आजादी की लड़ाई का हिस्सा बन चुके थे। धीरे-धीरे उनको देश के बडे राजनेता के रूप में जाना जाने लगा। अखिल भारतीय कांग्रेस के 1909 के अधिवेशन के वह अध्यक्ष बने। पूरे देश के भ्रमण व लागों के सम्पर्क से उन्हें यह स्पष्ट दिखने लगा कि अनेक भाषाओं के इस देश में भारत के स्वतंत्र होने पर किसी एक भाषा को सम्पर्क भाषा के रूप में राष्ट्र भाषा का रूप लेना पड़ेगा। देश के अधिकांश भाग में तथा जनसंख्या के अधिकांश भाग द्वारा किसी न किसी प्रकार की हिन्दी बोली जाती थी जबकि देश की अन्य भाषायें भी उतनी ही महत्वपूर्ण होते हुए भी इतने विशाल जनसुदाय के द्वारा प्रयोग में नहीं आती थीं। एक स्वतंत्र राष्ट्र को जोडने के लिए एक राष्ट्र भाषा के रूप में उन्होंने हिन्दी की महत्ता को परखा। उन्होंने यह अनुभव किया कि देश के गैर हिन्दी भाषा क्षेत्रों में जनमानस को हिन्दी जानने का व समझने का अवसर मिलना आवश्यक है। फलत: वर्ष 1910 में उन्हीं के प्रयासों से काशी में ''हिन्दी साहित्य सम्मेलन'' की स्थापना हुई जिसके वह प्रथम अध्यक्ष बने। धीरे-धीरे पूरे देश में हिन्दी के प्रचार व प्रसार के लिए हिन्दी साहित्य सम्मेलन की शाखायें बनी जिनके माध्यम से भारत के गैर हिन्दी भाषा क्षेत्रों के जन समुदाय को हिन्दी पढ़ने व सीखने का अवसर मिला। अपने स्वभाव के अनुरूप हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना करने के बाद मालवीय जी ने इसे बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन को चलाने के लिए सौंप दिया जिस प्रकार ऑल इण्डिया सेवा समिति की स्थापना करने के बाद उसे मालवीय जी ने पंडित हृदय नाथ कुंजरू को सौंप दिया था। कालान्तर में कांग्रेस के अधिवेशन में हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा बनाने के प्रस्ताव को स्वीकृति प्राप्त हुई तथा भारत के स्वतंत्र होने पर संविधान द्वारा भी हिन्दी को ही राष्ट्रभाषा बनाया गया।

इसी प्रकार आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र द्वारा काशी में स्थापित ''नागरी प्रचारिणी सभा'' भी नागरी लिपि के प्रचार-प्रसार में लगी थी- किन्तु समुचित मार्गदर्शन प्राप्त न होने के कारण उसकी स्थिति बिगड़ रही थी। मालवीय जी ने नागरी प्रचारिणी सभा की गतिविधियों में आरम्भ से ही अत्यधिक रुचि ली तथा नागरी प्रचारिणी सभा को भी हिन्दी के प्रचार-प्रसार के कार्य में गतिशील बनाकर उसे एक प्रकार से पुर्नजीवित कर दिया।

आज इस देश के लोगों को सम्भवत: इस बात का अहसास भी न होगा कि भारत वर्ष में हिन्दी को विश्वविद्यालयों में एक विषय के रूप में कोई भी मान्यता प्राप्त नहीं थी। मालवीय जी ने काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी को सर्वप्रथम एक विषय के रूप में मान्यता दी। आज हिन्दी की पढ़ाई सारे विश्वविद्यालयों में प्रचलित है। हिन्दी साहित्य के पुरोधा पं० रामचन्द्र शुक्ल, पं० अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध', पं० भगवानदीन दीन आदि काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के ही रत्न थे।

मालवीय जी को हिन्दी के अखबारों का जनक कहना भी अतिआयोक्ति न होगी। कालान्तर से 'हिन्दुस्तान' का संपादन करने के बाद प्रयाग से वर्ष 1907 में प्रकाशित 'अभ्युदय' व उसके बाद 'मर्यादा' ने अपने समाचार पत्र व सम्पादकीय से जो अतिशय सफलता पाई वह बाद में प्रकाशित होने वाले अन्य समाचार पत्रों के लिए मार्गदर्शक बनी।

आश्चर्य होता है कि अपने जीवनकाल में अनेक कार्यों में अत्यधिक व्यस्त रहते हुए भी महामना मालवीय ने हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी के लिए कैसे इतना कार्य किया। उससे भी अधिक आश्चर्य होता है कि हिन्दी के क्षेत्र में इतना अधिक योगदान करने के बाद भी हिन्दी के प्रवर्तक व प्राण के रूप में महामना को क्यों नहीं जाना जाता ?

टिप्पणी -

इस लेख की सामग्री का मूल स्त्रोत नागरी प्रचारिणी सभा काशी से प्रकाशित आचार्य श्री चन्द्रबली पाण्डेय की पुस्तक 'राष्ट्रभाषा पर विचार' तथा लोक सभा सचिवालय से प्रकाशित पुस्तिका पंडित मदन मोहन मालवीय 'जीवनवृत्त' से है।

गिरिधर मालवीय (पौत्र श्री मदन मोहन मालवीय)
पूर्व न्यायाधीश, उच्च न्यायालय, (इलाहाबाद)

अमर प्रेम की देवी

एक सुखद अनुभूति ये,
मन को शीतलता देती है,
निर्बाध प्रेम की देवी हो,
हृदय निश्छलता रहती है।
चंचल, चपला मनभावन सी,
अंधरों से जब मुस्काती हो,
हृदय रूपी सितार में,
मधुवंती छेड़ जाती हो।
वर्षा की हो तुम मधुर फुहार,
वीणा की हो तुम राग मल्हार,
ललित, बिहाग, चन्द्रकौंस सी,
बागेश्री की हो पुकार।
हो राधा की मूरत की माला,
मतवाले प्यालों की हाला,
हो गंगाजल सा पावन स्पर्श,
अमर प्रेम की तुम हो ज्वाला।

- दिवांशु गोयल 'स्पर्श'

बंद दरवाजे के पीछे का सच

मैं देखती हूँ उस चिड़िया को
आसमान में उड़ान भरते
बिना हिचक बिना डर चहचहाते
अपनी मर्जी की मालिक वो खुद
हिचकोले भरती कभी इस छज्जे कभी उस छज्जे
ना किसी रिश्ते का बंधन
ना दिल में लिए फिरती कोई उलझन
जलन होती है मुझे इससे
सोचा करती हूँ की काश मेरी भी किस्मत
आजादी के रंग सी खिलती
देखने लगती हूँ में भी सपने
कब गले लगेंगे मुझसे मेरे अपने
यह दर्द जो मुझे मिल रहा
मेरी आत्मा को झिझोड़ रहा
छलनी छलनी होती मेरी सहनशक्ति
दिन रात करती हूँ परमात्मा से विनती
ऐसी कैद किसी दुश्मन को भी ना मिले
इतना जुल्म कभी कोई ना सहे
डर लगता है अपनी चुप्पी तोडने से
इस समाज के नीम से भी कड़वे ताने सुनने से
इस राक्षस ने खून किया मेरे विश्वास का
अपमान किया पति पत्नी के पवित्र रिश्ते का
फांसी के फंदे से झूलते हुए
मेरे सपनों को मै देखती हूँ
अन्दर ही अन्दर अपने गमो को
आँसुओ से धोती हूँ
अपने दरवाजे की चौखट को
लांघने की सोचती हूँ, जुबां पर लगे ताले की
चाबी को मैं ढूँढती हूँ
शरीर के जख्म आज नही तो कल भर ही जाएँगे
पर दिल पर लगी चोट के निशाँ
समय के साथ और गहराएंगे
होता होगा परियों की कहानी में कोई
राजकुमार शहज़ादा
पर असल जिन्दगी में तो रोज
भेड़िये को झेलती हूँ ।

- पायल चौहान (द्वितीय वर्ष)

... पृष्ठ 2 का शेष

वचनामृत

ऋषियों के तपोबल तथा वायु और जल के आहार पर की गई उनकी तपस्या ने इसकी रक्षा की और इसलिए यह कल्प-लता आज भी हरी है।

कुछ लोगों की धारणा है कि बुद्ध भगवान् ने एक नये धर्म का प्रचार किया था, किन्तु यह भ्रममात्र है। बुद्ध तो हमारे दस अवतारों में है। बड़ा मानकर ही शंकराचार्य ने बुद्ध को ''यतीनां चक्रवर्ती'' कहा। बौद्ध-धर्म हमारे प्राचीन वैदिक धर्म का एक अंग है। मनुष्य की सबसे बड़ी पूंजी, धर्म ही है।

मनुष्य अपने कपड़ों को रोज धोता है तथापि कई दिन पहन चुकने के बाद जब कपड़ा अधिक मैला हो जाता है तो उसको चौथे, आठवें या पन्द्रहवें दिन साबुन या रीठे से धोता है या धुलवाता है और उस कपड़े की मैल जो नित्य धोने पर भी बच जाती है, वह निकल जाती है। इसी प्रकार ऋषियों ने मनुष्य मात्र के हित के लिये प्रातःकाल और सायंकाल की संध्या और उपासना-विधि के अतिरिक्त पन्द्रहवें दिन एकादशी व्रत का विधान किया है।

जो पाप पुराने होकर सूख गये हैं या जो अभी ओदे अर्थात् तुरन्त के किये हैं उन सब पापों के धोने के लिए एकादशी का व्रत सबसे ऊंचा साधन है।

मनुष्य को परमात्मा ने सबसे बड़ी निधि बुद्धि दी है। जो वस्तु बुद्धि को मैली करती है या हर लेती है उसको मादक अर्थात् नशीला द्रव्य कहते हैं। मनुष्य को उचित है कि किसी प्रकार का नशीला पदार्थ कभी ग्रहण न करे। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों पदार्थों के साधन का मूल कारण आरोग्य है।

दूध पियो कसरत करो, नित्य जपो हरिनाम।
हिम्मत से कारज करो, पूरेंगे सब काम।।

मान, प्रतिष्ठा और गौरव की रक्षा के लिये प्राण अर्पण करना अच्छा मालूम पड़ता है। रोग की अवस्था में सबका विचार रोग के दूर करने का होना चाहिए, परन्तु औषधि भोजन नहीं है। मैं जाति के भाव से ब्राह्मण से लेकर चाण्डाल तक को भाई समझता हूँ। जाति के पक्ष से तथा जाति की ममता से हमें सब प्यारे हैं। हम धर्म को चरित्र-निर्माण का सीधा मार्ग और सांसारिक सुख का सच्चा द्वार समझते हैं। हम देश-भक्ति को सर्वोत्तम शक्ति मानते हैं जो मनुष्य को उच्चकोटि की नि:स्वार्थ सेवा करने की ओर प्रवृत करती है। शिक्षा सारे सुधारों की जड़ है। जनता की स्थिति में उन्नति ही, सुराज्य की वास्तविक परीक्षा है।

5. अर्जुन और भगवान्

गीता के वक्ता और श्रोता कौन थे? इन बातों को पहले स्मरण करके तब गीता का पाठ आरंभ करें। गीता-प्रवचन में विद्वान् चुने-चुने फूल भगवान् को अर्पण करने लगते हैं। उन उपदेशों को नोट कर ले जो मौके पर काम देंगे। क्योंकि आपत्ति, दु:ख और संकट के समय इसी का सहारा मिलेगा। मनुष्य मरणासन्न हो जाता है, तब अन्तिम समय में भी इससे कल्याण होता है। जैसे कोई धनी अपनी इमारत बनाता है उसी तरह जीवन की इमारत कल्याणप्रद उपदेशों से बनती रहे जिससे इस लोक में आनन्द मिले और परलोक सुधरे।

जो अर्जुन अपने युग के अद्वितीय योद्धा थे, जो शुभगुणों से संपन्न थे, जिनके मित्र भगवान् कृष्ण थे, वे भी जब अपने कर्तव्य से विमुख होने लगे और एक साधारण कायर की तरह विषाद करने लगे और विमोह में पड़कर अपने लक्ष्य को भूल गए तब मनुष्य की क्या गणना हो सकती है।

अर्जुन को पहले समझ लीजिए कि उनमें क्या विशेषता थी? अर्जुन कोई मामूली आदमी नहीं थे। वे अपने युग के महापुरुष थे। अर्जुन की वीरता का गुण-गान भीष्म पितामह ने किया है। गुरु द्रोणाचार्य जी ने दुर्योधन आदि कौरवों के सम्मुख परीक्षा लेते हुये कहा था कि धनुर्विद्या आदि में अर्जुन के बराबर कोई नहीं है। अर्जुन की शक्ति और ब्रह्मचर्य की महिमा इन्द्र और उर्वशी ने बतलाई है। अर्धरात्रि के एकान्त में रूपवती तरुणी उर्वशी अर्जुन से मिलती है, उस समय अर्जुन उसे माता कहते हुए प्रार्थना करते हैं कि आप पूज्या हैं, आप श्रेष्ठ हैं, मेरी रक्षा करो। नवयुवकों को अर्जुन के दमन से शिक्षा लेकर बली ब्रह्मचारी बनना चाहिए।

आपमें वे सब श्रेष्ठ गुण थे जो स्वभावत: मनुष्य और देवयोनि को प्राप्त होते हैं। वे रूपवान् व्रती, पवित्र आचरण वाले, बल-बुद्धि से युक्त, तेजवान, प्रतिभावान्, चतुर, विद्यास्नातक, सुहृद, अभिमानरहित, स्थिर, संकल्पी, सत्यवादी और गुरु-भक्त थे।

ऐसे अर्जुन गीता में प्रश्न पूछने वाले थे। उस व्यक्ति की शंकायें सिवाय कृष्ण भगवान् के और कौन दूर कर सकता था? अर्जुन की सब शंकाओं का उत्तर देना और अपने कर्तव्य में लगाना बड़ा कठिन था। मानव-जीवन में जो कठिनाइयाँ आती हैं, मनुष्य कर्म कैसी-कैसी विषम परिस्थितियों के कारण अपने कर्तव्य से मोहवश सब किये हुए कर्म फल को नष्ट कर देता है। उसे गीता के उपदेश से ही परम लाभ प्राप्त होता है। भगवान् कृष्ण का उपदेश कैसे प्राप्त हुआ? कितने वीरों का संहार होकर इस अमूल्य निधि की प्राप्ति हुई। वेदव्यास जी तथा भीष्म पितामह दोनों महापुरुषों ने, इन दो सत्यवक्ताओं ने भगवान कृष्ण को साक्षात् विष्णु कहा है। व्यास जी ने महाभारत में गुणगान करते हुए अन्त में श्रीमद्भागवत् की रचना कर परम शान्ति प्राप्त की है।

भगवान् कृष्ण के स्वरूप का वर्णन वेदव्यास जी ने कैसा अपूर्व बताया है कि तीन लोकों में ऐसी सुन्दरता कभी किसी को प्राप्त नहीं हुई।

आपके अपूर्व गुण महाभारत के शान्ति पर्व में कैसे विस्तार से कहे गये हैं, उनका वर्णन करना असंभव है। केवल विद्वान् ही उनका आनन्द ले सकते हैं। मैं तो छात्रों को संक्षेप में कह देता हूँ।

ये अपूर्व गुण वासुदेव में थे जिनके बराबर तीन लोक में कोई हुआ ही नहीं। युधिष्ठिर की सभा में बड़े-बड़े राजा, महाराजा, ऋषि, महर्षि थे किन्तु जब कृष्ण भगवान् सभा में पधारे तभी सभा सुशोभित हुई। सभा में उपस्थित सभी लोगों ने कहा कि इनकी पूजा हम लोग ही नहीं करते वरन् तीन लोक इनकी उपासना करते हैं, इस बात पर शिशुपाल को बुरा लगा। उसने गाली देना शुरू किया। भगवान् ने उसके सौ अपराध क्षमा किये। अन्त में उसका नाश हुआ। सर्वसम्मति से तथा भीष्म पितामह आदि की हार्दिक इच्छा से कृष्ण भगवान् की सबसे पहले पूजा हुई। कृष्ण भगवान् बल, विद्या, पौरुष, शस्त्रशास्त्र सभी में अद्वितीय थे। उस सभा में इस प्रकार दीख रहे थे जैसे आकाश में तारागणों के मध्य चन्द्र सुशोभित होता है। दुर्दिन में मेघों में से शाम को सूर्य दिखने से जो प्रसन्नता होती है, जब रुकी हुई हवा बहने लगती है और मनुष्यों को प्राण से मिल जाते हैं। वैसी प्रसन्नता सभा को हुई।

भगवान् की कैसी अलौकिक छवि इन श्लोकों में दिखा दी गई है। इससे बढ़कर संसार में, विश्व में किसकी शोभा हो सकती है।

ब्राह्मण ज्ञान में वृद्ध हो, क्षत्रिय बल में अधिक हो, वैश्य धन सम्पत में बड़ा हो और शूद्र आयु में बड़ा हो तो श्रेष्ठ कहलाता है।

भीष्म पितामह और वेदव्यास जी आपका गुणगान करते-करते थक गये। इन दोनों सत्यवादी महापुरुषों की कीर्ति जगत् प्रसिद्ध है। इन्होंने कहा है कि ''तमेव शरणं गच्छ'' वासुदेव की शरण जाने से प्राणीमात्र का कल्याण है। अत: कृष्ण भगवान् को जानने के लिए सबसे पहले भीष्म और वेदव्यास जी को जाने। उन कृष्ण भगवान् ने गीता का अमृतपान अर्जुन को कराया है। उस अर्जुन के हृदय में गहरा मैल जम गया था जिसके निकालने में १८ अध्याय गीता के कहने पड़े। उसका सब विकार धो दिया और उसकी कायरता दूर कर कर्तव्य में लगा दिया। भगवान् ने ज्ञान, भक्ति, कर्म, सन्यास, त्याग सभी बातों का निचोड़ बता दिया। अर्जुन से कह दिया कि- कैसी मृदङ्ग की थाप लगाई कि तप, व्रत आदि धर्मों का भरोसा छोड़कर मेरी शरण आ जाओ, रंज मत करो, मत दु:खी हो, मैं सब तरह से रक्षक हूँ। गीता का उपदेश देकर अर्जुन को ही नहीं वरन् मानव-मात्र को उनका कर्तव्य बता दिया कि धर्मयुद्ध में प्राण निछावर कर दे। १८ अक्षौहिणी सेना का संहार होने के बाद गीता का उपदेश संसार के कल्याणर्थ मिला है। धर्म के लिए सब कुछ अर्पण कर दे, प्राण तक दे दें, पर अधर्म और अनर्थ न होने दें। जहाँ धर्म है, वहाँ परमात्मा का भरोसा है। जहाँ धर्म है वहाँ कृष्ण हैं, वहाँ उद्यमी अर्जुन हैं और जहाँ इन दोनों का मेल है वहाँ लक्ष्मी, विजय, नीति सब कुछ है।

6. पं. जवाहर लाल नेहरू का दृष्टिकोण

दुनियाँ की पहली बड़ी लड़ाई का जमाना आया। हमारे यहाँ का राजनैतिक काम और ठण्डा हो गया, क्योंकि दुनियाँ की लड़ाई चल रही थी। कुछ ध्यान उधर जाता था कि दुनियाँ का अब क्या होगा। इसी लड़ाई के दौरान फिर कुछ नई बातें हुई और फिर से हल्के हल्के हिन्दुस्तान उठा और हवा बदलने लगी। शायद आज लोगो को याद हो वह जमाना जब लोकमान्य तिलक ने एक होम-रूल लीग शुरू की थी और एक श्रीमती एनीबेसेण्ट ने हमारी संस्था कांग्रेस भी, जिसके सबसे पुराने और बडे नेता पूज्य मालवीय जी थे, कुछ जागने लगी थी।

लड़ाई खत्म हुई और दूसरी बाते सामने आईं। थोड़े ही दिनो बाद पंजाब का जलियाँवाला बाग हत्या कांड हुआ। मार्शल लॉ वगैरह का जमाना और उसमे मालवीय जी की एक बहुत बड़ी भूमिका रही। यानी उसकी तहकीकात में, जांच-पडताल में और उनकी सहायता करने में उस समय मुझे उनके साथ बहुत काम करने का मौका मिला। उसके बाद असहयोग आन्दोलन शुरू हुआ और तरह तरह की बाते हुई। गांधी जी मैदान में आए लेकिन इस सारे जमाने मे भी मालवीय जी का असर महज इलाहाबाद पर ही नही सारे भारत की राजनीति पर बहुत जबर्दस्त रहा। कांग्रेस जब सें शुरू हुई, वह हमारे राजनैतिक आन्दोलन की एक खास निशानी रहे। उसे शुरू करने में, बनाने में और बढ़ाने में मालवीय जी का एक बहुत बडा हिस्सा रहा हैं। इसमे कोई शक नही कि समय की हवा देखकर, वायुमण्डल को देखते हुए, भारतीय राजनीति में मालवीय जी अगुआ भी रहे और एक कड़ी भी रहे जोड़ने की उन लोगों को, जो कांग्रेस में आगे पीछे गिने जाते थे, यानी नरम और गरम दल वालो को। यह तो हुई हमारी राजनीति की बात, जो अपने में खुद एक बडी बात है।

दूसरी बड़ी बात थी उनका हमारी संस्कृति की ओर एक खास झुकाव उसको बढ़ाने की हर वक्त कोशिश करते थे और उसकी निशानी तो आपको हर जगह मिलेगी, इलाहाबाद में, बनारस में और-और जगह भी। मालवीया जी किसी भाषा के निरोधी नहीं थे। वे चाहते थे कि हिन्दी और संस्कृत की यहाँ तरक्की हो, भारत में, और यह एक बहुत ठीक बात थी। वे जो बात करने की कोशिश करते थे, बिना किसी का विरोध किए हुए। विरोध करने का कोई सवाल ही नही है विधा और इल्म का विरोध नही होता। उस समय पहली बात तो यह क्याकि देश कुछ भटक रहा था, भटक गया था। हमारे लोगो में, बडे छोटे सभी में, अंग्रेजी पढ़े-लिखे लोगों की एक नयी जाति -सी कायम हो गई थी। कायम तो नहीं हुई थी, हो रही थी। हालाकि राजनैतिक जीवन में हम अंग्रेजी हुकुमत का मुकाबला करते थे, वह रोज-बेरोज, सख्त होता जाता था, लेकिन अंग्रेजी संस्कृति का, संस्कृति क्या अंग्रेजियत का उस समय के हमारे नेताओं पर ज्यादा असर था। मालवीय जी ने कोई विरोध इन बातों का भी नही किया था, हाँ अपना सारा वजन उन्होने हिन्दुस्तानियत पर, भारतीयता पर डाला और तराजु के पलडे को कुछ बराबर करने पर। उस समय भी बहुत सारे लोग थे, बडे विद्वान लोग थे, सस्कृति के बडे पंडित लोग भी थे पर यहाँ तक मेरा विचार हैं, राजनैतिक नेताओं में, बड़े नेताओं में मालवीय जी शायद इस मामले में सबसे आगे थे। वे रोकते थे अंग्रेजियत की बाढ को, पर विरोध करके नहीं बल्कि अपने काम से, अपने विचारों से और कोशिश करते थे अपनी संस्कृति को बढाने की। इस सिलसिले में उनका सबसे बडा काम हुआ हिन्दु विश्वविधालय की स्थापना। यह बड़ी भारी बात थी। विश्वविधालय के सामने उद्देश्य था, लक्ष्य था। आजकल के जमाने के विज्ञान व विज्ञान की औलाद यानी टैक्नोलॉजी इण्डस्ट्री वगैरह को पुरानी भारतीय संस्कृति के साथ जोडना। एक तरफ भारतीय संस्कृति हैं। हम लोग उसी में ढले हैं और भारत इन सैकड़ों - हजारो बरसों में उसके साये में पला है। उसका असर हमारे रगो रेशे में हैं। उसमे कुछ खराबियां पैदा हुई। पुरानी संस्कृति में नहीं, उसके बदलते हुये ढ़ग में। खराबियाँ आई, लेकिन जो चीज असली उसमे थी वह खरा सोना था। वह तो बेशकीमती था, और भारत के लिए उसे भूल जाना एक तरह से अपने को भूल जाना है, क्योंकि उसी मिट्टी में हम पैदा हुए और उसी में बने। लेकिन उसी के साथ उतनी ही आवश्यक बात यह है कि हम आजकल की दुनिया को समझें। आजकल की दुनिया विज्ञान की है। अगर हम उसको नहीं समझते तो हम पिछड जाते हैं। हमारे देश के लिए दोनों ही आवश्यक हैं। मालवीय जी के सामने दोनो बाते थी। बनारस विश्वविद्यालय के सामने उन्होने दोनो लक्ष्य रखे। वही सवाल हम सबके सामने आज भी हैं। इन दोनों पहियों पर हिन्दुस्तान की गाड़ी तेजी से आगे चली।

अगर हम देखे कि कैसा सम्बध रहा पूज्य मालवीय जी का अपने जमाने से और पुराने जमाने से, तब आप अन्दाजा लगा सकेंगे कि वे कितने महान थे, कितने बडे थे। मालवीय जी तो आगे देखते भी थे, और लोगो को आगे ले जाते थे। इसमें कोई शक नही कि वे बहुत ही बडे महापुरुष थे हमारे देश के, सारे देश को उन पर गर्व है। उनकी याद में श्रद्धांजलि पेश करनी चाहिए। सबसे बडी याद तो उनकी बनारस का विश्वविद्यालय हैं। सबसे बडी याद किसी की क्या हो सकती हैं। यह तो खास उन्ही की चीज हैं लेकिन पिछले सारे सत्तर बरस से ऊपर के हमारे राजनैतिक इतिहास में, भारत के इतिहास में उनका नाम एक चमकते हुए सितारे की तरह रोशन है। शुरू से ही कांग्रेस के और कितने ही और मैदान उन्होने रोशन हिस्सा लिया और उसको चमकाया, आगे बढाया।

हमारे सामने तो कई ऐसी मिसालें हैं जिनसे हम सीख सकते हैं - आजकल के लोग, आजकल के नौजवान बहुत कुछ सीख सकते हैं। मालवीय जी के जीवन से उनके सामने जो लक्ष्य था, जैसे उन्होने काम किया और सफलता पाई इन सबसे। हम मूर्तिया खड़ी करें, संस्थाए बनायें, यह तो ठीक है, लेकिन आखिर में सबक सीखे उनकी जिन्दगी से, उनके काम से और सीखकर उसी रास्ते पर चले, आज कल के जमाने में उनको लगाकर चले, आगे बडे तो यही उनका सबसे बडा स्मारक हो सकता हैं। यह अच्छा है कि समय आया उनकी जयन्ती मनाने का, तो पुराने और नये लोग सब फिर सोचे, विचार करे और सीखे कि वे क्या -क्या बातें थी जिनसे मालवीय जी इतने ऊंचे महापुरूष हुए कैसे उन्होने भारत की आजादी के रास्ते में, अपनी संस्कृति का आदर करने के रास्ते में सबको बढाया और यह कि उनके बतलाये रास्ते पर चलकर भारत की सेवा हम किस तरह करें और आगे बढ़ें।

यद्यपि महामना का पार्थिव शरीर हमारे बीच में नहीं है लेकिन हमारा विश्वास है कि जब तक हमारा धर्म और संस्कृतिक का अस्तित्व रहेगा, तब तक महामना मालवीय जी अमर रहेंगे, उनकी वाणी अमर रहेगी।

- डॉ. ज्योति जोशी

प्रथम आगमन

बड़े सौभाग्य से प्रवेश पाया, हम आशायें लेकर आये,
नई राह को चुनने की, नव करके दिखलाने की।
इसी ध्यये को ले करके, हो विनम्र हम सीखेंगे
सब को गुरूसम ही पायेंगे, अखण्ड भाव जगायेंगे,
इसी की मोहमा को बढाने, नित नव आविष्कार करेंगे,
जो देखेंगे हर्षायेंगे, हमे शुभ आशिर्वाद मिलेंगें।
यह संस्था है महान, जग करता इस का गौखगान,
पूरा देश आशान्वित है, होन हारों को पाने को।
हम भी पूर्ण समर्पित हैं, चमत्कार कर दिखलानें को,
इस की महिमा को पाकर, पूर्व राष्ट्रपति के बाद पदासीन
राष्ट्रपति का आगमन हुआ।

सी. एल. शर्मा (पूर्व तकनीकी सहायक)

त्रासदी

जहाँ कल तक एक सवेरा था
वहाँ आज घना अंधेरा है,
होती थी जहाँ फरियाद कभी
छीना किसने वो बसेरा है
जहाँ गूँजती थी आवाज कभी
खामोशी का वहाँ अब डेरा है
ऐसा क्या हमने गुनाह किया
कुदरत ने जो इसका सिला दिया
माँ बाप हर एक साये को
सिर पर से पूरा मिटा दिया
जहाँ धारा थी निर्मल जल की
आँसू के झरनों में वो बदल गयी
तीरथ की कभी जो मंशा थी
वो एक ''त्रासदी'' में बदल गयी
अब जाकर कहाँ दुआ माँगू
किस दर पर मैं फरियाद करूँ
बिखरी हुयी अपनी दुनिया को
फिर से कैसे मैं आवाद करूँ।

'' उत्तराखण्ड त्रासदी में अपनों से बिछड़े लोगों को समर्पित'' या
''उत्तराखण्ड त्रासदी के गवाह बने परिवारों को समर्पित ''

अन्मेष कुमार श्रीवास्तव

पर्यावरण प्रदूषण: प्रदूषण का स्वरूप व परिणाम

पर्यावरण प्रदूषण के कारण ही पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है। इस ताप का प्रभाव ध्वनि की गति पर भी पड़ता है। एक डिग्री सेल्सियस ताप बढ़ने पर ध्वनि की गति लगभग साठ सेंटीमीटर प्रति सेकेण्ड बढ़ जाती है। आज हर ध्वनि की गति तीव्र है और श्रवण शक्ति का ह्रास हो रहा है। यही कारण है कि आज बहुत दूर से घोड़ों के टापों की आवाज जमीन पर कान लगाकर नहीं सुनी जा सकती। जबकि प्राचीन काल में राजाओं की सेना इस तकनीक का प्रयोग करती थी। बढ़ते उद्योगों, महानगरों के विस्तार तथा सड़कों पर बढ़ते वाहनों के बोझ ने हमारे समक्ष कई तरह की समस्या खड़ी कर दी हैं। इनमें सबसे भंयकर समस्या है प्रदूषण। इससे हमारा पर्यावरण संतुलन तो बिगड़ ही रहा है साथ ही यह प्रकृति प्रदत्त वायु व जल को भी दुषित कर रहा है। पर्यावरण में प्रदूषण कई प्रकार के हैं। इनमें मुख्य रूप से ध्वनि प्रदूषण, वायु प्रदूषण और जल प्रदूषण शामिल हैं। इनसे हमारा सामाजिक जीवन प्रभावित होने लगा है। तरह-तरह के रोग उत्पन्न होने लगे हैं।

औद्योगिक संस्थाओं को कूड़ा-करकट रासायनिक द्रव्य व इनसे निकलने वाला अवजल नाली-नालों से होते हुए नदियों में गिर रहे हैं। इसके अतिरिक्त अंत्येष्टि के अवशेष तथा छोटे बच्चों के शवों को नदी में बहाने की प्रथा है। इनके परिणामस्वरूप नदी का पानी दूषित हो जाता है। हालांकि नदी के इस जल को वैज्ञानिक तरीके से शोधित कर पेय जल बनाया जाता है। लेकिन इस कथित शुद्ध जल के उपयोग से कई प्रकार के विकार उत्पन्न हो रहे हैं। इनमें खाद्य विषाक्तता तथा चर्म रोग प्रमुख है। प्रदूषित जल मानव जीवन को ही नहीं कई अन्य क्षेत्रों को भी प्रभावित करता है। इससे कृषि क्षेत्र भी अछूता नहीं है। प्रदूषित जल से खेतों में सिंचाई करने के कारण उनमें उत्पन्न होने वाले खाद्य पदार्थों की शुद्धता व उसके अन्य पक्षों पर भी उसका दुष्प्रभाव पड़ता है।

शुद्ध वायु जीवित रहने के साथ-साथ हमारे जीवन के लिए आवश्यक है। शुद्ध वायु का स्रोत वन हरे भरे बाग व लहलहाते पेड़ पौधे हैं। क्योंकि यह जहां प्रदूषण के भक्षक हैं। वहीं यह हमें आक्सीजन प्रदान करते हैं। बढ़ती जनसंख्या के कारण आवास की समस्या उत्पन्न होने लग रही है। मानव ने अपनी आवासीय पूर्ति के लिए वन क्षेत्रों और वृक्षों का भारी मात्रा में दोहन किया। इसके अलावा हरित पट्टियों पर कंकरीट के जाल रूपी सड़कें बिछा दी हैं। इस कारण हमें शुद्ध वायु नहीं मिल पा रही। इसके अितिरिक्त कारखानों से निकलने वाली विषैली गैसें धुंआ कूड़े-कचरों से उत्पन्न गैस वायु को प्रदूषित कर रही है। रही सही कसर पैट्रोलियम पदार्थ से चलने वाले वाहनों ने पूरी कर दी है। स्कूटर , मोटर साइकिल, कार, बस, ट्रक आदि वाहन दिन रात सड़कों पर दौड़ रहे हैं। इनसे जो धुंआ निकलता है उसमें कार्बनडाइ आक्साइड, सल्फ्यूरिक ऐसिड और शीशे के तत्व शामिल होते हैं। जो हमारे वायुमंडल में घुलकर उसे प्रदूषित करते हैं। दिल्ली जैसे महानगर में वायु को प्रदूषित करने में वाहनों की अहम् भूमिका है। वायु को प्रदूषित करने में इनका हिस्सा साठ प्रतिशत तथा शेष कारखानों व अन्य स्रोतों के जरिये होता है। वायु प्रदूषण से श्वास सम्बन्धी रोग उत्पन्न होते हैं। इसके अलावा यह हमारे नेत्रों व त्वचा को भी प्रभावित करती है।

हमारे वातावरण में मनुष्य की ध्वनि के अतिरिक्त प्रकृति और प्राकृतिक वातावरण से सुनाई देने वाली भी कुछ ध्वनियां हैं। पक्षियों के चहचहाने, पत्तों के टकराने, बादलों और समुद्र की हल्की गर्जना आदि से भी ध्वनि उत्पन्न होती है। इन ध्वनियों को प्रकृति का संगीत मानकर उनका आनन्द लिया जाता है। लेकिन यही ध्वनियां जब तेज हो उठती हैं तो कानों को चुभने लगती हैं। तेज ध्वनि से कानों के पर्दे फट जाने और व्यक्ति के बहरा हो जाने का भय होता है। इन भयप्रद ध्वनियों के प्रभाव को वास्तव में ध्वनि प्रदूषण कहा जाता है।

प्रातः से ही हम ध्वनि प्रदूषण का शिकार होने लगते हैं। इस समय मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों में कीर्तन मण्डलियों द्वारा लाउडस्पीकर चलाकर भजन गाये जाते हैं। यह भी ध्वनि प्रदूषण का एक बहुत बड़ा हानिप्रद कारण है। इन पर अंकुश लगाने में हमारा धर्म आड़े आ जाता है। यही कारण है कि इस पर कानूनी अंकुश लगाने में सफलता नहीं मिल पा रही है। इसके अतिरिक्त मोटरो, कारों, ट्रकों, बसों, स्कूटरों आदि के तेज आवाज वाले हॉर्न, तेज गति व आवाज से दौड़ती हुई रेलें, कल कारखानों के बजते भोंपू व मशीनों की आवाज भी ध्वनि प्रदूषण फैलाती है। संगीत की कोकिल ध्वनि चित्त को जहां शांति व खुशी प्रदान करती है वहीं दूसरी ओर वाहनों का शोर हमें कान की व्याधि का शिकार बना रहा है। ध्वनि व शोर में कोई अधिक अंतर नहीं है। शोर वह ध्वनि है जिसे हम नहीं चाहते। अधिक तीव्रता एवं प्रबलता की ध्वनि ही शोर कहलाती है।

बड़े शहरों के खुले वातावरण में तीस डेसीबल का शोर हर समय रहता है। कभी-कभी यह पचास से डेढ़ सौ डेसीबल तक बढ़ जाता है। उल्लेखनीय है कि किसी सोये हुए व्यक्ति की निद्रा चालीस डेसीबल के शोर से खुल जाती है। पहले प्रातः चिड़ियों की चहचहाट से नींद खुलती थी लेकिन अब मोटर वाहनों की शोरगुल से नींद खुलती है। अकेले दिल्ली में सड़कों पर दौड़ते वाहनों एवं कर्कश कोलाहल से करीब सवा करोड़ की आबादी में से अधिकतर लोग शोर जनित बहरेपन के शिकार हैं। ऐसे लोगों को फुस्फुसाहट सुनाई नहीं देती। पचास डेसीबल का शोर हमारी श्रवण शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। दीवाली पर चलाये जाने वाले पटाखों का शोर दौ सौ डेसीबल से भी अधिक होता है।

ध्वनि प्रदूषण कानों की श्रवण शक्ति के लिए तो हानिकारक है ही साथ ही यह तन मन की शान्ति को भी प्रभावित करता है। ध्वनि प्रदूषण के कारण मानव चिड़चिड़ा और असहिष्णु हो जाता है। इसके अलावा अन्य कई विकार पैदा होने लगते हैं।

हमें प्रदूषण से बचने के लिए हरित क्षेत्र विकसित करना होगा। इसके अतिरिक्त आवासीय क्षेत्रों में चल रही औद्योगिक इकाइयों को वहां से स्थानांतरित कर इन इकाइयों से निकलने वाले कचरे को जलाकर नष्ट करने जैसे कुछ उपाय अपनाकर प्रदूषण पर कुछ हद तक नियंत्रण पाया जा सकता है।

- सुखबीर कुमारी (शोधार्थी- रसायन विज्ञान)

मुझे अभिमान हो

आज मुझे फिर इस बात का गुमान हो,
मस्जिद में भजन, मंदिरों में अजान हो,
खून का रंग फिर एक जैसा हो,
तुम मनाओ दिवाली, मैं कहूं रमजान हो,
तेरे घर भगवान की पूजा हो,
मेरे घर भी रखी एक कुरान हो,
तुम सुनाओ छन्द 'निराला' के,
यहाँ गालिब से मेरी पहचान हो,
हिंदी की कलम तुम्हारी हो,
यहाँ उर्दू मेरी जुबान हो,
बस एक बात तुझमे मुझमे,
वतन की खातिर यहाँ समान हो,
मैं तिरंगे को बलिदान दूँ,
तुम तिरंगे पे कुर्बान हो।

-दिवांशु गोयल 'स्पर्श'

''बस कुछ कदम दूर हैं शोहरत मेरे हिस्से की''

शिद्दत से ठानी है नामुमकिन ख्वाबों को हकीकत में तबदील करने की, फितरत नही
मेरी लोगो की बातो में समय गँवाने की,
क्योंकि जिद की है मैने किस्मत का रूख मोडने की,
अगर काँटे बिछे है राह में तो नही ये बात डरने की,
क्योंकि उन्हें बदलना होगा बहार में जब से मैंने प्रतिज्ञा की,
धूप है राह में तो क्या मेरे अंदर भी धधक रही गर्मी जलने की, सूरज भी है देख हैरान कैसे सोची तूने दुनिया बदलने की, अर्जुन सा ध्यान लक्ष्य पर गिद्ध सी नजर गडी है मंजिल को पाने की,
कोशिश दिल से पूरी है
रास्ते पर बिना थके चलने की,
हौसले पस्त होने लगे मेरे यार तो सोच लेना
बस कुछ कदम दूर हैं शोहरत मेरे हिस्से की

- पायल चौहान (द्वितीय वर्ष)

माँ की ममता की याद

बीत गया जो बचपन मेरा ममता का
वह बचपन ही लौटा दे माँ।
मारी थी किलकारी जिस आँचल में
वह आँचल ही लौटा दे माँ।
गिरता पडता चलना सीखा जिस
आंगन में वह आंगन ही लौटा दे माँ।
खडी खाट और रई बिलोनी अधबिली
दही और माखन ही लौटा दे माँ।
स्वाद चखे है पकवानों के पर मुझको कोई याद नहीं
तेरे हाथ निवाला खाया था जो उसके जैसा स्वाद नहीं
सारा जीवन जी आया पर तेरी ममता सा आगाज नहीं
गीत सुने है दुनिया के पर तेरी लोरी जैसा साज नहीं
पहले निवाला देकर मुझको तब रोटी तुझको भाती थी,
हँसता देख लाल को अपने मंद-मंद ही मुस्काती थी।
खींच के पल्लू तेरा मै जब साथ ठिठोली करता था,
तू पीछे पीछे भगती थी मै डगमग-डगमग चलता था।
मीठे-मीठे सपने देखूं ऐसी गहरी नींद सुला दे माँ
सपनों की बेला में खोजोंउ वह लोरी गीत सुना दे माँ
तोतरी-तोतरी बाँता से तू फिर से मेल करादे माँ
ओझल ना होजाऊँ तेरी नजरों से
नजरों की जेल करादे माँ।
तेरी नजरों की जेल करादे माँ।
बीत गया जो बचपन मेरा ममता का
वह बचपन ही लौटा दे माँ।
तेरी ममता का वह बचपन ही लौटा दे माँ
ममता वह बचपन ही लौटा दे माँ

- सत्यराज त्यागी
निजी सहायक, संकाय अधिष्ठाता

बचपन

मदनमोहन मां की सीख पर सदा दूध पीते व मक्खन खाते थे। उन्ही के शब्दों में- ''मैंने वह आहार किया है जो राजा महाराजाओं को भी दुर्लभ हैं। राजा-महाराजा नौकर के हाथ का बनाया भोजन खाते हैं जो प्रेम से नहीं बल्कि वेतन लेकर भोजन बनाते हैं। मैंने बालकपन से लेकर युवावस्था के अन्त तक माता व बहिन के हाथ का भोजन पाया है। जो प्रत्येक दिन मेरी रूचि का स्वादष्टि भोजन बड़े प्रेम से बनाती और बड़े प्रेम से खिलाती थी।''

अपनी प्रारम्भिक शिक्षा, पं. हरदेव जी के पाठशाला से समाप्त कर कुछ दिनों तक वे विद्या धन प्रवाहिनी में पढ़ते रहे। जब वे नौ वर्ष के हुए तभी पिता ब्रजनाथ जी ने मदन मोहन को 'बटु' बना दिया। पिता जी ने उन्हें सावित्री मंत्र दिया। कौपीन पहिने, फ्लाश दण्ड लिए, कन्धे पर मृगछाला ढाले हाथ में झोली लिए जब बालक ने अपनी पूज्य माता जी के पास जाकर कहा- ''भवती भिक्षां में देहि।'' यह सुनते ही मां के प्रेमाश्रु उमड़ आए और उन्होंने अपने इस होनहार व लाडले लाल को कलेजे से लगा लिया। उस समय कौन जानता था कि मृगछाला व कौपीन उतार कर फेंक देने पर भी एक दिन यही 'बटु' बहुत बड़ी झोली लेकर संसार का सबसे बड़ा भिखारी कहलाकर एशिया का कीर्तिवान काशी विश्वविद्यालय की स्थापना कर भारत की कीर्ति बढ़ाने वाला बनेगा।

मदनमोहन जब बच्चों को स्कूल जाते देखते तो उन्हें भी लालसा होती कि हम भी क्यों न अंग्रेजी पढ़ें? पर स्कूल की फीस के लिए घर में पैसे नहीं थे। जिस परिवार में कमाने वाला एक हो और खाने वाले दस हों और स्वाभिमानी परिवार हो तो उसकी माली हालत का आसानी से अन्दाजा लगाया जा सकता है। जहाँ पांच रूपये महीने की भी आमदनी न हो वहाँ स्कूल की फीस और पुस्तकों का खर्च कहां से आवे?

परन्तु पं. ब्रजनाथ जी ने अपने लाडले बच्चे का मन नहीं मारा उसे अंग्रेजी पढ़ने भेजा। माँ ने अपने पड़ोसी महाजन लाला गया प्रसाद जी के यहाँ हाथ के कड़े गिरवी रख दिए और उससे फीस दे दी। इधर जब कथावाचन से दक्षिणा व आरती में जो पैसे आते उन पैसों से कड़े छुड़ा लिए जाते और फीस अदा करने पर फिर से उन्हें गिरवी रख दिया जाता। ऐसी विषम परिस्थिति में इस होनहार बालक ने इन्हीं कड़ों से सहारे शिक्षा अर्जित की।

जिस स्कूल में मदनमोहन पढ़ने जाते थे उनके शिक्षक एक अंग्रेज 'गार्डन साहब' थे जो अनुशासन एवं नियम के बड़े पक्के थे। अतएव वहां सभी छात्रों को समय पर आना अनिवार्य होता था।

इधर मदनमोहन को प्रायः देर हो जाया करती थी। इतने बड़े परिवार में भोजन समय पर बन नहीं पाता था। बिचारे लाचार होकर रोजाना 'मट्ठे के साथ ही बासी रोटी' खाकर स्कूल दौड़ जाते। इतना होने पर भी वे लेशमात्र विचलित नहीं हुए और थोड़े ही दिनों में उन्होंने स्कूल में शुद्ध अंग्रेजी शब्दोच्चारण- विन्यास और सुन्दर लेखन में कमाल की ख्याति प्राप्त कर ली।

घर में स्थानाभाव होने के कारण उनकी पढ़ाई में बाधा पड़ने लगी। घर में थोड़ी दूर सोहनलाल की बगिया में उनके सहपाठी गंगाप्रसाद रहते थे। वहाँ लाल बेरी के तीन-चार पेड़ थे। एक कुआं था और उसकी एक कच्ची अटारी थी। बस सूरज छुपते ही मदनमोहन लालटेन लेकर वहां पहुंच जाते ओर लालटेन की रोशनी मे काफी देर रात तक पढ़ते और रात को वहीं पर सो जाते। सुबह होने पर उठकर घर चले आते। यह उनके जीवन का नियमित क्रम बन गया था।

स्कूल से आते ही वे घर से बाहर निकल जाते और नित्य अखाड़े में मुग्दर घुमाते, व्यायाम करते। सेवा-वन्दना में भी वे सदा आगे रहते। संगीत सीखने की उनकी रुचि बढ़ी। और उन्होंने बांसुरी तथा सितार बजाना सीखा और प्रातः काल अथवा संध्या के समय वे अपने पिता से संगीत के साथ - साथ मीरा व सूर के पद भी सस्वर गाने और सीखते और इस प्रकार अभाव में भी वे प्रसन्नतापूर्वक दिन काटते रहे थे।

- रमेश चन्द्र कौशिक

एक शिकायत है तुमसे

आज एक टूटी सी कलम मिली बस्ते में,
ये शायद वही है,
जिससे हम साथ लिखा करते थे,
मेरी कविता के नीचे अपना नाम भी,
तुमने इसी से लिखा था शायद,
तुम्हारे बिना कुछ उदास सी है आज,
कहो तो वो कलम भिजवा दूँ।
क्या इतनी व्यस्त रहती हो तुम,
अब तो दुपहरी का बहाना भी बनाने लगी हो
मेरी हंसाने की अदा की तो तुम कायल थीं,
उसी का कर्ज उतार दिया होता,
एक खत में अपनी हंसी भिजवा दी होती,
अभी भी फुर्सत के
दो पल पड़े हैं मेरे पास,
कहो तो वो पल भिजवा दूँ।
साथ बैठकर देखें वो सपने
तो नहीं भूली ना तुम,
बाल अभी भी खुले रखती हो
या चोटी बांध ली है,
एक रूपया उधार है तुम्हारा मुझ पे,
लौटाने के बहाने मिलेगा किसी रोज 'स्पर्श'
मेरा दिया दुपट्टा ओढ़ के आना,
फिलहाल तो कुछ यादें ही
अब शेष हैं मेरे पास,
कहो तो वो यादें भिजवा दूँ।

- दिवांशु गोयल 'स्पर्श'

संगति का प्रभाव

एक महात्मा अपने शिष्यों के साथ घूमने जा रहे थे। मार्ग में वे अपने शिष्यों को अच्छी संगति के महत्व को समझा रहे थे किन्तु शिष्यों को समझ नहीं आ रहा था।

महात्मा ने मार्ग में एक गुलाब का पौधा देखा जो गुलाबों से लदा हुआ था। उन्होने एक शिष्य को निर्देश दिया कि वो उस पौधे के नीचे से मिट्टी का ढेला उठा कर लाये। शिष्यों जब ढेला लेकर आया तो महात्मा ने निर्देश दिया ''इसे सूंघो''। शिष्य ने सूंघने के पश्चातें कहा कि ''गुरू जी इसमें से गुलाब की महक आ रही है।''

जानते हो यह महक क्यों आ रही है मिट्टी से ? ये गुलाब की संगत का असर है। गुलाब की पत्तियाँ मिट्टी पर टूट-टूट कर गिरती है और सुगंधित करती है। इसी प्रकार व्यक्ति भी जैसी संगत में रहेगा उस में वैसे ही गुण-दोष आ जायेंगे। अतः हमे सदैव अच्छी संगत रखनी चाहिए।

संकलनकर्त्ता: **अंशु सक्सेना**
स्थापना शाखा, नियोजन एंव प्रशिक्षण विभाग

राहुल के पापा

शाम के 7 बजे थे। हर रोज की तरह विकास अपने स्कूल का होमवर्क निपटा कर खेलने में व्यस्त हो गया। तभी दरवाजे पर घंटी बजी। विकास घंटी की आवाज सुनकर दरवाजे पर लपका, जैसे उसे पहले से ही पता हो कि वहाँ कौन है। दरवाजा खुलने की ही देर थी कि वो तुंरत सामने खड़े आदमी से जा चिपका और जोर से चिल्लाया- माँ माँ, चाचाजी आए हैं। उसकी आवाज में खुशी साफ झलक रही थी। माँ रसोईघर से बाहर आ गई और नमस्ते कह कर बैठने को कहा। मगर विकास की नजर चाचाजी के थैले पर थी।

''अरे हां भई, लाया हूँ। आज तुम्हारे लिए ये सेब और ये रिमोट वाली कार आया हूँ''। चाचाजी विकास की व्यग्रता ताड़ते हुए बोले। उसे और क्या चाहिए था, बस कार लेके ऐसा उड़न छू हुआ कि पूछो मत।

भाईसाहब क्या जरूरत थी इन सब की? विकास की मां ने झेंपते हुए कुछ व्याकुलता भरे स्वर में कहा।

''अरे! कैसी जरूरत भाभी? विकास मेरे भी बेटे जैसा है, आखिर हूँ तो मैं उसका सगा चाचा ही, और फिर मैं जो अपने बेटे राहुल के लिए लाता हूँ वही विकास के लिए भी ले आता हूँ। दोनों हम उम्र हैं, पंसद-नापसंद एक सी बस''। चाचाजी ने एक सांस में अपनी बात कह दी। इस पर माँ कुछ नहीं बोल पाई बस विकास के खिलखिलाते चेहरे और चाचाजी की संतुष्टि भरी मुस्कान को देखकर खुद को राजी कर लिया।

रात को विकास के पापा जब खाने की टेबल पर बैठे थे तो मां खाना परोसते हुए कुछ गुस्से से बोली 'अजी सुनते हो! ये आजकल भाईसाहब हर रोज विकास के लिए कुछ न कुछ लेकर आते हैं। ये अच्छी बात नहीं है, मैं कहे देती हूँ।'

विकास के पापा कुछ उदासीन से स्वर में बोले- ''हाँ तो क्या हुआ इसमें? छोटा सा तोहफा ही तो है। और वैसे भी वो विकास को अपना सगा बेटा मानता है, इसमें बुरा क्या है?''

दूसरी ओर विकास अपनी प्लेट में चुपचाप नीचे देखते हुए सब सुन रहा था। शायद उसके माँ-बाप को ये नहीं मालूम था कि बातें उस कच्ची मिट्टी में किस रूप में ढ़लने वाली हैं। ''अजी आप तो कुछ समझते ही नहीं हो''। अचानक माँ का स्वर कुछ तेज हुआ।

''विकास का तो केवल बहाना है। हमसे ज्यादा पैसे वाले हैं ना वो बस इसी बात का दिखावा करने रोज कुछ न कुछ ले आते हैं। अरे हम क्या हमारे बच्चे को खिला-पिला नहीं सकते, या उसे खिलौने नहीं दिला सकते। अगर इतना ही पैसा है तो जाके अपने बच्चे पे खर्च करे, हम पे एहसान करने की क्या जरूरत है। भगवान न करे एक दिन इसी एहसान को हमारे ऊपर ही इस्तेमाल करेंगे वो। और ये रोज रोज की नवाबी ना हमारे ही बच्चे की आदत बिगाड़ेगी। कल को जब हमसे असली की कार मांगेगा जब कहां से लाकर देंगे हम। कहना अपने भाई से फिर वहीं देंगे''।

अब तब ये बातें उसके बाल मन पर गहरी छाप छोड़ चुकी थीं। अगले दिन शाम को फिर दरवाजे पर घंटी बजी। विकास को इस बार भी पता था कि दरवाजे पर कौन है, लेकिन इस बार न तो उसकी चाल में तेजी थी और न ही चेहरे पर वो चमक। दरवाजा खोलने पर वो आज उनसे चिपका नहीं मगर आवाज जरूर दी- माँ, ''राहुल के पापा'' आए है।

-दिवांशु गोयल (चतुर्थ वर्ष, विद्युत अभियंता)

पूजनीय कौन?

एक मंदिर में स्थापित प्रस्तर प्रतिमा पर चढाए गए पुष्प ने क्रोधित होकर पुजारी से कहा, ''तुम प्रतिदिन एक प्रस्तर प्रतिमा पर मुझे चढ़ाकर इसकी पूजा करते हो यह मुझे कतई पंसद नहीं है। पूजा मेरी होनी चाहिए क्योंकि मैं कोमल, सुंदर, सुवासित हूँ। यह तो मात्र पत्थर की मूर्ति है।'' मंदिर के पुजारी ने हँसते हुए कहा, हे पुष्प, तुम कोमल, सुंदर, सुवासित अवश्य हो पर ऐसा तुम्हें ईश्वर ने बनाया है। ये गुण तुम्हें सहजता से प्राप्त हुए हैं। इनके लिए तुम्हें कोई श्रम नहीं करना पड़ा है। पर देवत्व प्राप्त करना बड़ा कठिन काम है। इस देव प्रतिमा का निर्माण बड़ी कठिनाई से किया जाता है। एक कठोर पत्थर को देव प्रतिमा बनने के लिए हजारों चोटें व मार सहनी पड़ती है। चोट लगने पर अगर यह टूट कर बिखर जाता तो शायद यह कभी देव प्रतिमा नहीं बन सकता था। एक बार पत्थर देव प्रतिमा में ढल जाए तो लोग उसे बड़े आदर भाव से मंदिर में स्थापित कर प्रतिदिन उसकी पूजा अर्चना करते हैं। इस प्रस्तर की सहनशीलता ने ही इसे देव प्रतिमा के रूप में पूजनीय तथा वंदनीय बना दिया है।

यह सुनकर पुष्प मुस्कुरा दिया। वह समझ गया कि कठिन परीक्षा को सफलता पूर्वक पार करने वाला ही देवत्व प्राप्त करता है।

– संकलनकर्त्ता : **योगेश डुचानिया**

पृष्ठ 1 का शेष ...

ईश्वर कारयिता कब ...

यहाँ भी उसको प्रभु अर्थात् सर्वसमर्थ कहा गया है। अत: वह कर्त्तव्य कर्म और कर्मफल संयोग को पालित करने में समर्थ है। सामान्यत: वह ऐसा करता है।

वह हृदय में अन्तर्यामी रूप से बैठा हुआ सबको शक्ति देता है, जैसे सूर्य सबके नेत्रों का प्रकाश देता है। इस प्रकाश को कहीं कुदृष्टि और कहीं सुदृष्टि में लेने हेतु आप स्वतन्त्र हो। और यह भी आप प्रकृति अनुसार करते हो। कर्त्तव्य और कर्म ये दोनों स्वभाव अर्थात् प्रकृति के अनुसार होते है। कर्मफल संयोग भी स्वभाव के अनुसार होता है। प्रारब्ध ज्ञान प्रकृति के नियम के अनुसार स्वयं हो जाता हे। इस ज्ञान को ईश्वर को बनाकर संचालित नहीं करना पड़ता।

ईश्वर विभु हे। यहां विभु का एक तात्पर्य है कि ईश्वर व्यापक निर्लिप्त हुआ करता है। जैसे आकाश सब कहीं व्यापक है। इसलिये शौचालय की मलिनता और मन्दिर की पवित्रता वह ग्रहण नहीं करता। जब हम कर्म ईश्वरार्पित करते है तब ईश्वर लेता नहीं है। किन्तु कर्म ईश्वरार्पित करने पर हमारा अन्त: करण शुद्ध हो जाता है। जैसे सूर्य अर्ध्य देने से हमको श्रद्धा और पवित्रता मिलती है क्योंकि सूर्य स्वरूपत: भगवान का अंश है। भगवान ज्ञानरूप है इसलिये प्राणी का अपना स्वरूप भी ज्ञान ही है लेकिन ज्ञान अज्ञान से ढ़ंका हुआ है। जैसे अग्नि अपने द्वारा उत्पन्न भस्म से ढ़ंक जाती है। भस्म का कोई स्वतन्त्र अस्त्वि नहीं है। अग्नि से ही उत्पन्न हुई है लेकिन भस्म अग्नि को ढ़ंक लेती है। ऐसे ही अज्ञान भी प्राणी के ज्ञान को ढ़ंक लेता है। ज्ञान ढ़ंक जाने से प्राणी मोह में पड गया है। वह लगभग मूर्छित हो गया है। फलत: वह ईश्वर को कारयिता मानता है।

आपने देखा होगा, जब मनुष्य पर विपत्ति आती है, मनुष्य का अमीष्ट होता है, तब वह उसका दोष ईश्वर को देता हे। लेकिन जब मनुष्य सफल होता हैं, जब कोई पौरूष प्रकट करता है, जब सुख पाता है तो उसका कर्त्ता अपने को मानता है। बहुत सीधी बात है यह सम्भव नहीं है कि अच्छे के कर्ता आप हों और बुराई का कर्ता ईश्वर हो। यदि आप अच्छाई और बुराई दोनों को मानते तो भी आप कर्म के बन्धन से छूट जाते क्योंकि कर्म का अहंकार आप में नहीं आता। लेकिन यह स्पष्ट बेइमानी है कि अच्छाई हम करते है और बुराई ईश्वर करते है। ईश्वर सच्चिदानन्दधन, अखण्ड, एक रस और निर्विकार है। निर्विकार होने के कारण वह कर्ता नहीं है और कारयिता नहीं हे क्योंकि कारयिता होने के लिये उसमें संकल्प उठना चाहिये। ईश्वर केवल तब कर्ता या कारयिता होता है, जब हम अपने को पूरी तरह ईश्वर पर छोड देते है। यह तो उसने प्रतिज्ञा की है कि जो जिस प्रकार मेरा भजन करता है मैं भी उसका उसी प्रकार भजन करता हूँ। इसलिये जब आप कहते हो मेरा संचालक भगवान है वह चाहे जो करावे मैं इसके हाथ का यन्त्र हूँ (पूर्ण समर्पण भाव) तब आपके लिये केवल आपके लिये ईश्वर कारयिता हो जाता है। तब अपकी चिन्ता ईश्वर करने लगता है। लेकिन सामान्य रूप से वह निष्क्रिय है। निर्विकार हैं और जब तक भक्ति का गुण आप उसमें न होने दे वह निर्गुण है।

- अंशु सक्सैना

हे पथिक तेरी विजय हो

हे पथिक,
रुकना नहीं, झुकना नहीं, तेरी विजय हो।
आँधियाँ उठने लगेंगी, बिजलीयाँ गिरने लगेंगी,
हलचलें मचने लगेंगी,
आस्था का, ज्ञान का, विज्ञान का, नव,
दीप उदय हो।
कंटका कीर्ण पथ होने लगेंगे,
प्रिय सभी खोने लगेंगे, उग्र उभरते ज्वार के,
आवेग सबल होने लगेंगे
चाहे निराशा के वलय हों,
विश्वास से भरा किंतु हृदय हो।
सँधि भी है, क्रांति भी है,
युद्ध अपने आप से है, इस समर में घन-अंधेरे
छाने लगे, चुपचाप से है।
तन सबल हो मन प्रबल हो,
पूर्ण अभय हो!
कर्ज साँसों का चुकाती, जा रही है जिन्दगी।
गर्दिशों की मार को, सहते हुए की बंदगी।
मंजिलें किस्मत ने दी पर
रास्ते खुद से ही तय हों।
प्रेरणा का स्रोत है शक्ति का भंडार है तो
सत्य-शिव-शाश्वत् भक्ति का आगार है तो
हे पथिक! रुकना नहीं झुकना नहीं ,
हे पथिक, तेरी विजय हो।

'दीपेश सोनार' शोधार्थी (मैके.इंजी.)

... पृष्ठ 3 का शेष

श्रील प्रभुपाद

की भविष्यवाणी थी कि भगवान चैतन्य की शिक्षाएं संपूर्ण विश्व में फैलेंगी। श्रील भक्तिसिद्धांत सरस्वती महाराज भगवान श्री चैतन्य महाप्रभु की शिक्षाओं के निष्कर्ष का प्रचार कर रहे थे कि ''कृष्ण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं और उनके पवित्र नाम के कीर्तन पर अन्य समस्त धार्मिक क्रियाओं से अधिक बल दिया जाना चाहिए।'' पहले के युगों में भगवद् प्राप्ति के अन्य साधन उपलब्ध थे लेकिन कलयुग में केवल हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन ही प्रभावशाली है।

अपने गुरु की कृपा एवं सान्निध्य से अभय चरण यह जान रहे थे कि कलियुग के इस कलहपूर्ण वातावरण में वैष्णव संस्कृति किस तरह सभी के लिए कल्याणदायी है। 1932 में दीक्षा प्राप्त करने के बाद अगले 30 वर्षों में संपूर्ण विश्व में कृष्णभावनामृत का प्रचार उनकी प्रबल इच्छा को दर्शाता है। 1947 में गौड़ीय वैष्णव समाज ने उनके महत्वपूर्ण योगदान के लिए उन्हें भक्तिवेदान्त की उपाधि प्रदान की।

56 वर्ष की आयु में श्रील प्रभुपाद ने अपने गुरू के आदेशों का क्रियान्वयन गम्भीरतापूर्वक करना प्रारम्भ कर दिया। उन्होंने झाँसी में कहा था कि ''ये सारा संसार एक आध्यात्मिक क्रान्ति की प्रतीक्षा कर रहा है। तत्पश्चात् उन्होंने अपने आध्यात्मिक आन्दोलन को चलाने हेतु ''लीग ऑफ डिवोटिज'' की स्थापना की। दिल्ली में ''बैक टू गॉडहैड'' के छापने एवं बेचने के अपने प्रयास को जारी रखते हुए अभय चरण ने दिल्ली से 80 मील दक्षिण (वृन्दावन) में रहने का निश्चय किया। वृन्दावन की महिमा का सर्वत्र प्रचार करने की इच्छा से प्रेरित होकर ''बैक टू गॉडहैड'' के प्रत्येक अंक को निकालने के लिए अभय चरण निरन्तर वृदावन में रहने लगे। चैतन्य महाप्रभु के छः शिष्य थे जिन्हें सभी षड गोस्वामी के नाम से जानते थे। उन सभी गोस्वामी द्वारा लिखी गई समस्त किताबें वृन्दावन के राधा दामोदर मंदिर में रखी हुई थी जो कि बहुत ही पुरानी एवं महत्वपूर्ण थी। अतः 1950 से श्रील प्रभुपाद वृन्दावन में राधा-दामोदर मंदिर में रहने लगे। जहाँ पर उन्होंने श्रीमद्भागवत का अंग्रेजी में अनुवाद शुरू किया एवं भारत छोड़ने से पहले श्रीमद्भागवत के प्रथम तीन स्कंध उन्होंने यहीं पर लिखे। एक बार स्वप्न में अपने गुरु के द्वारा प्राप्त आदेश को स्वीकार कर अभय चरण ने संन्यास ग्रहण करने का निश्चय किया। संन्यास ग्रहण करना, श्रीमद्भागवत् के अनुवाद तथा प्रकाशन का विचार, पश्चिमी देशों में जाकर प्रचार करने की उनकी इच्छा, ये सब परस्पर जुड़े हुए थे। मनुष्यों के जीवन के आध्यात्मिक शून्य को भरने के लिए पुस्तकों का लेखन आवश्यक था। अतः 1959 में श्री प्रभुपाद ने भक्ति प्रज्ञान ''केशव महाराज'' से संन्यास ग्रहण किया।

13 अगस्त 1965 को श्री प्रभुपाद जलदूत नामक जहाज से न्यूयॉर्क के लिए चल पड़े। यात्रा के दौरान उन्हें दो बार दिल का दौरा भी आया किन्तु भगवान् कृष्ण की कृपा से उन्हें कुछ नहीं हुआ। अमेरिका में कोई भी उन्हें जानता नहीं था और वे यह भी नहीं जानते थे कि कैसे वे कृष्णभावनामृत का प्रचारकर पायेंगे, उन्होंने अपने वे विचार (जो उन्होंने भगवान् श्री कृष्ण के समक्ष प्रस्तुत किये) उन्होंने अपनी डायरी में भी प्रकट किये थे।

मैं नहीं जानता आप मुझे यहाँ क्यों लाए हैं। अब आप जैसा चाहें वैसा मेरे साथ कर सकते हैं। मुझे लगता है कि आपको यहाँ अवश्य ही कोई कार्य है, अन्यथा आप मुझे इतनी दूर एवं इस अनजान जगह पर क्यों लाते। मैं यहाँ के लोगों को कृष्णभावनामृत का ज्ञान किस तरह दे पाऊँगा? मैं बहुत ही दुर्भाग्यशाली हूँ क्योंकि मैं इसके लिए उपयुक्त नहीं हूँ।

इसलिए इन लोगों को समझाने हेतु मुझे आपके आशीर्वाद की आवश्यकता है क्योंकि आपके आशीर्वाद के बिना मैं खुद यह कर पाने में असमर्थ हूँ।

इस तरह के विचारों के साथ 19 सितम्बर को वे न्यूयॉर्क पहुँचे। श्रील प्रभुपाद के पास उस समय केवल चालीस रूपये एवं कुछ किताबें ही थीं। कृष्णभावनामृत के प्रचार में उन्हें कई तरह की कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा था, पर वे डटे रहे क्योंकि उन्हें अपने गुरु के आदेश का पालन करना था। वे अमेरिका में कृष्ण के विषय में प्रचार करने आये थे। धीरे-धीरे उन्होंने कृष्णभावनामृत के प्रचार के लिए श्रीमद्भागवत एवं श्रीमद्भगवद्गीता के प्रवचन देने शुरू कर दिये एवं सभी को भगवत् प्रसाद का वितरण करने लगे। वहीं पर उन्होंने श्रीमद्भागवत के बचे हुए स्कन्धों का अंग्रेजी में अनुवाद किया। उन्होंने न्यूयॉर्क शहर में श्री कृष्ण का मन्दिर बनाने का निश्चय किया। जिस स्थान पर वे लोगों को भगवद्गीता का प्रवचन देते थे, वह स्थान बहुत ही छोटा था, किन्तु अपने छोटे से कम सुविधायुक्त आवास स्थान में भी उन्होंने नियमित बैठक और कीर्तन के द्वारा लोगों को कृष्ण की ओर आकर्षित किया। वे नित्य ''टॉम्पकिन्स पार्क'' में बैठकर हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करने लगे जिससे काफी लोग उनसे जुड़ने लगे। कुछ समय बाद उन्होंने वहाँ पर अंतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ (इस्कॉन) की स्थापना की। अंतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ की स्थापना के साथ ही विश्व में कृष्ण भक्ति का एक नया अध्याय शुरू हुआ।

श्रील प्रभुपाद ने इस्कॉन के सात उद्देश्य निर्धारित किये :

1. जीवन के असन्तुलन को नियंत्रित करना एवं विश्व में वास्तविक एकता व शान्ति स्थापित करना।
2. भगवद्गीता व श्रीमद्भागवत् में प्रतिपादित कृष्णभावनामृत का प्रचार करना।
3. सम्पूर्ण मानव समाज में यह भावना विकसित करना कि प्रत्येक जीवात्मा भगवान कृष्ण के गुण का अभिन्नांश है।
4. पावन दिव्य लीला धाम का निर्माण करना।
5. सामूहिक कीर्तन आन्दोलन को प्रोत्साहन देना।
6. सदस्यों को सरल स्वभाविक जीवन पद्धति में सुशिक्षित करना।
7. उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पत्रिकाओं, पुस्तकों तथा अन्य रचनाओं को प्रकाशन करना।

इसे चत्मकार ही कहेंगे या फिर गुरु की असीम कृपा, कि 69 वर्ष की उम्र में भी वे युवाओं से भी अधिक कार्य कर रहे थे। श्रील प्रभुपाद के जीवन का हर पहलू युवाओं के लिए प्रेरणा स्त्रोत है। बहुत सी कठिनाइयों के बावजूद उन्होंने विश्व भर में (108) इस्कॉन मन्दिरों की स्थापना कर यह दर्शा दिया कि किसी भी महान् कार्य को पूर्णता प्रदान करने के लिए स्वयं श्री कृष्ण सहायता प्रदान करते हैं।

उन्होंने अपनी उम्र का ध्यान न रखते हुए भी 70 वर्ष की आयु में संपूर्ण विश्व में कृष्णभावनामृत का प्रचार करने के लिए 14 बार विभिन्न देशों की यात्राएं की। इस दौरान उन्होंने हजारों लोगों को कृष्ण भक्त बनाया और लगभग 10,000 ऐसे भक्तों को दीक्षा दी जिन्होंने अपना पूरा जीवन कृष्णभावनामृत के प्रचार में लगा दिया। इन्हीं 12 वर्षों में उन्होंने पूरी दुनिया में राधा-कृष्ण मंदिर, वैदिक गुरुकुल, वैदिक साहित्य छापने वाली दुनिया की सबसे बड़ी प्रकाशक संस्था (भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट), भारत के वृन्दावन से प्रभावित होकर पश्चिम वर्जिनिया में न्यू वृन्दावन की स्थापना की एवं वैदिक साहित्य पर 80 से अधिक पुस्तकें लिखीं। प्रत्येक वर्ष भारत के जगन्नाथपुरी में जो रथयात्रा निकाली जाती है उसकी तर्ज पर उन्होंने संपूर्ण विश्व के विभिन्न देशों में भगवान् जगन्नाथ, बलदेव एवं सुभद्रा मैया की विशाल एवं भव्य रथयात्राओं का आयोजन शुरू किया। जीवन के अंतिम वर्षों में वे वृन्दावन में रहे एवं वहाँ पर भी वे अंतिम समय तक कृष्णभावनामृत के प्रचार में ही लगे रहे। 14 नवम्बर, 1977 का वे यह भौतिक दुनिया छोड़कर पुनः भगवद्धाम लौट गये। पर आज भी वे नित्य नई लीलायें करते हुए भगवद् नाम का प्रचार सम्पूर्ण विश्व में कर रहे हैं।

उन्होंने एक बार एक इतिहासकार (Arnold J. Toynbee) के साथ एक साक्षात्कार के दौरान कहा था - ''मैंने अमेरिका एवं भारत के लोगों में जिस कृष्णभावनामृत का प्रचार शुरू किया है अगले 10,000 वर्षों तक यह निरन्तर बढ़ता ही रहेगा।''

- साभार : ''हरे कृष्णा टाइम्स'' अक्षय पात्र, जगतपुरा, जयपुर

संकलनकर्त्ता : दिव्यज्योत जोशी

कोई भी इच्छा न हो और किसी का भी अवलम्बन न लेना पड़े, यह 'सुख' की व्याख्या है।

युवाओं में आध्यात्म के अभ्यास की प्रासंगिकता

भारत एक ऐसा राष्ट्र है जिसने सदियों तक तकनीकी कुशलता से नहीं अपितु आध्यात्म मार्गदर्शक के रूप में विश्व की समस्त मानव जाति का नेतृत्व किया है। भारत विश्व के चार प्रमुख धर्मों की मातृभूमि रहा है। इस राष्ट्र ने सदैव मानवता को परम सत्य की खोज के लिए अग्रसर किया है। वर्तमान समय में इस परम्परा को आगे बढ़ाने की जिम्मेदारी भारत के युवा वर्ग पर है। वास्तविकता यह है कि भौतिक सम्पन्नता मात्र से ही संतोष, संतुष्टि एवं जीवन में पूर्णता की प्राप्ति नहीं हो जाती है। पूर्ण विकसित एवं सम्पन्न देशों में रह रहे व्यक्तियों की एकान्त एवं नीरस जीवन शैली इस तथ्य को और मजबूत करती है।

आध्यात्म हमें एक वैकल्पिक जीवन की शिक्षा देता है, इस जगत को एक भिन्न नजरिए से देखने की दृष्टि प्रदान करता है एवं जीवन के सनातन पहलुओं की सीख देकर आशा की एक नवीन किरण उजागर करता है। यह हमें जीवन के आनन्द को 50-60 वर्षों में ही भोग लेने की सीमित विचारधारा से अनन्त विचारधारा की ओर ले जाता है।

यह दर्शन शास्त्र-जीवन का आचरण भारतीय युवा वर्ग को विधाता के एक अमूल्य उपहार के रूप में उपलब्ध है। उन्हें इस अद्‌भुत अवसर की अपेक्षा नहीं करनी चाहिए। आध्यात्म किसी धर्म विशेष के अभ्यास से सर्वथा भिन्न हैं। समान समय काल में एक धार्मिक व्यक्ति आध्यात्मिक भी हो अथवा एक आध्यात्मिक व्यक्ति धार्मिक भी हो यह जरूरी नहीं है।

इस आधुनिक प्रतिस्पर्धात्मक जगत में एक सच्चा आध्यत्मवादी व्यक्ति ही सच्चा उपलब्धि-परक व्यक्ति है। जप योग का अभ्यास, भगवद्‌गीता, प्रामाणिक शास्त्रों का अध्ययन एवं आध्यात्मक के अन्य साधन व्यक्ति के मस्तिष्क एवं बुद्धिमत्ता को प्रखर बनाते हैं एवं व्यक्ति की वास्तविक पहचान- आत्मा को शुद्ध करते हैं।

आध्यात्म के अभ्यास की अनुपस्थिति से अनेक अमानवीय कृत्य जैसे हत्या, बलात्कार, दंगे एवं भ्रष्टाचार आदि का प्रचलन बढ़ता है। यदि हम संसार को इन सभी दुष्कृत्यों से आजाद करना चाहते हैं तो हमें आध्यात्म को प्रत्येक मनुष्य के जीवन में अपनाना होगा, विशेषतः युवा वर्ग के लिए।

वैदिक साहित्य में यह उल्लेख है कि यद्यपि परम ईश्वर सर्वव्यापक है तथापि मन्दिर एक ऐसा पवित्र स्थान है जहाँ हम उस परमात्मा पर अपना ध्यान केन्द्रित कर सकते हैं। जिस प्रकार ज्ञान अर्जन के लिए हम शिक्षण संस्था एवं तैराकी सीखने के लिए तरण ताल में जाते है उसी प्रकार हमें मन को नियन्त्रण करने की कला सीखने के लिए मन्दिरों के दर्शन करने की आवश्यकता है।

पारम्परिक मन्दिरों का निर्माण इस प्रकार किया जाता है कि वे समस्त ऊर्जा को अपने आप में केन्द्रित कर लेते हैं। मंदिर का शिखर, घण्टियाँ, प्रवेशद्वार, ताजे फूलों की सुगन्ध, दीपकों की रोशनी, वैदिक मंत्रों का उच्चारण, भगवान के पवित्र नामों का कीर्तन ये समस्त क्रिया-कलाप एक व्यक्ति को दैवीय शक्ति से सम्बद्ध रखते हैं।

युगों-युगों से मनुष्य इन सभी क्रिया कलापों का लाभ ले रहा है। इसी प्रकार वर्तमान पीढ़ी को भी इस दैवीय ऊर्जा का लाभ उठाना चाहिए एवं अपने आप को आनन्दमय जीवन के अवसर से वंचित नहीं रखना चाहिए। श्री चैतन्य महाप्रभु कहते है।

'भारत भूमि ते होईलो जन्म जार
जीवन सार्थक कोरी, कारो पर उपकार'

इसका तात्पर्य है कि विश्व को आध्यात्मिक दिशा प्रदान करने वाली भारत भूमि पर जन्म लेने का हम भारतवासियों को लाभ उठाना चाहिए एवं इस आध्यम का लाभ सम्पूर्ण विश्व को बांटना चाहिए। यह प्रत्येक मनुष्य के जीवन की प्राथमिकता होनी चाहिए।

-श्री रत्नाकर गोविन्द दास
अध्यक्ष (अक्षय पात्र जगतपुरा, जयपुर)

महामना मालवीय जी की दूरदर्शिता एवं योगदान पर आयोजित कार्यशाला

मालवीय जी की कार्यशाला का लेखा-जोखा : मालवीय जी की सोच एवं योगदान पर एक कार्यशाला का आयोजन किया गया जिसमें मालवीय जी को नजदीक से जानने वाले तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के नामचीन विद्वानों ने मालवीय जी के व्यक्तित्व, विचारों, शिक्षा, धर्म एवं सामाजिक सरोकारों पर विस्तृत चर्चा की। 7 व 8 अगस्त 2013 को आयोजित इस कार्यशाला से संस्थान के विद्यार्थी एवं शिक्षिक वर्ग को महामना पंडित मदन मोहन मालवीय जी के जीवन और जीवन दृष्टिकोण को जानने व समझने का अवसर मिला।

दीप प्रज्वलन - प्रो. पी.सी. डांडिया द्वारा कार्यशाला के उद्‌घाटन अवसर पर

कार्यशाला के उद्‌घाटन अवसर पर भारतीय पुलिस विभाग के वरिष्ठ अधिकारी डॉ. जैन अपने विचार व्यक्त करते हुये।

इस कार्यशाला का उद्देश्य मालवीय राष्ट्रीय तकनीकी संस्थान परिवार के सदस्यों को महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी के आदर्श, मूल्यों एवं राष्ट्र निर्माण में उनके योगदान तथा दूरदर्शिता से सरोकार कराना था।

महामना के आदर्शों में आध्यात्म, चरित्र निर्माण सम्मिलित हैं, जिन्हें केवल कठोर परिश्रम, सजगता एवं लक्ष्य के प्रति समर्पित होकर ही प्राप्त किया जा सकता है।

महामना का सम्पूर्ण जीवन जनसेवा के प्रति समर्पण, मित्रों के प्रति निष्ठा एवं प्रतिद्वन्दियों को क्षमा करने की उनकी शैली से परिभाषित किया जा सकता है। वे अपने समय के एक महानतम शिक्षाविद् रहे हैं।

यह कार्यशाला इस महान् व्यक्ति की महानताओं से लोगों को अवगत कराने का एक छोटा सा प्रयास था।

मालवीय जी के जीवन मूल्यों को पुनर्जीवित करना इस कार्यशाला का उद्देश्य था। मालवीय जी के विचार में शिक्षा, चरित्र निर्माण, देश भक्ति एवं भारतीय विरासत के सम्मान पर आधारित होनी चाहिए।

ये सभी मूल्य नई पीढ़ी को अपनाने चाहिए क्योंकि उसके कंधों पर ही राष्ट्रनिर्माण की जिम्मेदारी है।

पंडित मदन मोहन मालवीय का जीवन दर्शन एवं योगदान : अपने से निम्न बल के लोगों को घृणा से देखना साधारण मानवीय स्वभाव है। जैसे धनवान गरीब से घृणा करता है, सुंदर व्यक्ति कुरुप से घृणा करता है, ताकतवर व्यक्ति दुर्बल से घृणा करता है और साहसी व्यक्ति डरपोक व्यक्ति को घृणा से देखता है। किन्तु एक महान आत्मा एवं महान् प्रणेता वह है जो अन्य निर्बल-असहाय व्यक्तियों को ऊपर उठाने की अपनी जिम्मेदारी समझता है। श्री मदन मोहन मालवीय जी एक ऐसे ही जिम्मेदार व्यक्ति थे। वे असीम गुणों की खान थे एवं ऐसे बुद्धिवादी और योग्य व्यक्ति जो अन्य लोगो की भलाई की अभिलाषा रखते थे। वे अपने साथी लोगों को अच्छा करने के लिए प्रेरित, उत्साह वार्धित एवं प्रशंसा करते थे। इसलिए लोग उन्हें 'महामना' कहते थे। संवेदनशीलता एवं सादगी उनकेदो मजबूत गुण थे। वे इतने शालीन थे कि अपने घर पर नाम पट्टिका भी नहीं लगाते थे।

कार्यशाला में आमंत्रित वक्ताओं द्वारा महानमा जी पर दिए गए विचारों को संक्षेप में प्रस्तुत किया गया है :-

1. प्रो. पी.सी. दाण्डिया उद्‌घाटन समारोह के मुख्य अतिथि थे। उन्होंने महामना जी के साथ अपने व्यक्तिगत अनुभव बताए। उन्होंने कहा कि मालवीय जी विलासिता से दूर रहने वाले व्यक्ति थे। एक बार रोगग्रस्त होते हुए भी मालवीय जी ने छात्रों का निवेदन स्वीकारते हुए एक छात्रावास के उद्‌घाटन सारोह में भाग लिया। बीमार होने के कारण वो समारोह के मंच पर नहीं चढ़ सके। किन्तु उन्होंने अपनी कार में से ही छात्रों को सम्बोधित किया-

मालवीय जी के अनुसार - शैक्षणिक उत्कृष्टता में चरित्र निर्माण को प्राथमिकता देनी चाहिए, हमेशा गाय के दूध का सेवन करना चाहिए, शरीर की तदरूस्ती के लिए प्रतिदिन व्यायाम करना चाहिए एवं खेलना चाहिए, प्रतिदिन कम से कम 1 से डेढ़ घण्टे शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए।

2. श्री के.के. पाराशर जी ने हमें महामना जी के व्यक्तित्व की विशेषताओं के बारे में बताया। उन्हें एक राष्ट्र निर्माता, शिक्षाविद् कवि, पत्रकार, वकील, वक्ता एवं श्रेष्ठ मानव बताया। उन्होंने बताया कि महामना जी कहते थे कि शिक्षा संस्थाओं को मस्तिष्क एवं हृदय के संयोजन के अनुरूप कार्य करना चाहिए।

3. श्री बी.एल. बैद जी ने बताया कि मालवीय जी एक धैर्यवान एवं सहनशील व्यक्ति थे। हमें मालवीय जी की तरह ही समय एवं धन को महत्ता देनी चाहिए। हमें कंजूस नहीं बनना चाहिए अपितु रचनात्मक कार्यों में बुद्धि-पूर्ण तरीके से धन खर्च करना चाहिए। मालवीय जी चाहते थे कि बच्चों को प्रारम्भ से ही नैतिक मूल्य एवं शास्त्रों का ज्ञान देना चाहिए ताकि उनका जीवन चरित्रवान एवं सत्यनिष्ठ बने। मालवीय जी स्वयं इन गुणों के जीवन्त उदाहरण थे।

4. प्रो. एस.एस. छाबड़ा ने कहा कि ऐसे संस्थान जो नैतिक मूल्यों का पाठ पठाते हैं, वे जीवन - बुनियाद को मजबूत करते हैं। प्रो. छाबड़ा ने महामना जी के निर्देशों एवं सिद्धान्तों को अपनाया एवं उनके दिखाए हुए रास्ते पर स्वयं चले।

5. श्री वी.के. शर्मा जी ने महामना जी के दर्शन व सिद्धान्तों पर चर्चा की। उन्होंने महामना द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय को ''मिनी भारत'' की प्रतिकृति बताया। उन्होंने सृदृढ़ सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों को जनमानस में स्थापित करने के लिए तथ्यों की पुनरावृत्ति पर बल दिया। उन्होंने महामना जी के शिक्षा मॉडल को विस्तापूर्वक समझाया जिसके आधार पर शिक्षा में प्राचीन भारत की शैक्षिक प्रक्रियाओं का आधुनिक विज्ञान की तकनीकों के साथ समावेश होना चाहिए इससे भारतीय मूल्यों एवं विचारों का एकीकरण, पाश्चात्य एवं आर्थिक रूप से स्वतंत्र राष्ट्र विचार धाराओं के साथ होगा।

6. डॉ. (श्रीमती) चन्द्रमणि सिंह ने कार्यशाला के दौरान मालवीय जी के बारे में एक महत्वपूर्ण जानकारी सांझा की। उन्होंने बताया कि बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय के लिए धन इकट्ठा करने के लिए महामना जी जयपुर आए थे और लाल निवास में रुके थे। उन्हें जयपुर के राजा ने 5 लाख रूपए की सहायता राशि दी थी।

7. डॉ. ई.वी.डी. शास्त्री जी ने मालवीय जी के जीवन के उन क्षेत्रों के बारे में बताया जहाँ उन्होंने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया। उन्होंने कहा कि धार्मिक एवं उद्देश्य परक जीवन जीने के लिए समर्पण, ज्ञान एवं कर्म का मिश्रण होना चाहिए।

8. डॉ. मजूमदार जी ने महामना जी की शिक्षाओं से प्रेरित होकर अपने योगदान के बारे में हमें बताया। इस परिप्रेक्ष्य में उन्होंने मृदा प्रसरण पर किए गए अपने शोध के बारे में बताया जिससे जल संरक्षण को बढावा मिलेगा।

9. श्री अजय कुमार शर्मा जी ने बताया कि महामना जी की दूरदर्शिता इतनी परिपूर्ण है कि इससे आधुनिक शिक्षा की समस्त समस्याएं दूर हो सकती है। उन्होंने महामना जी की इस विचारधारा पर बल दिया कि उच्च शिक्षा समाज के विकास के लिए उत्तरदायी है क्योंकि इस पर समाज का बहुत सारा धन व स्त्रोत व्यय किया जाता है। इसी परिप्रेक्ष्य में महामना जी ने 145 विशेषताओं वाला बहुआयमी शिक्षा केन्द्र ''बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय'' स्थापित किया। इसका उद्देश्य मानवता को वैश्विक एवं व्यावहारिक शिक्षा प्रदान करना है।

10. श्री राम.एस. शर्मा जी ने महामना के दर्शनशास्त्र की संपदा के बारे में चर्चा की। जिसके अनुसार ''शिक्षा वह है जो बंधनों से मुक्त करती है''। श्री राम.एस. शर्मा जी ने महामना जी के उस तथ्य की भी व्याख्या की जिसमें मान्यता थी कि भारतवासी मात्र कृषि तक ही अपनी बुद्धि व कौशल दिखा सकते हैं। इस मान्यताओं को महामना जी ने गलत सिद्ध कर दिया था। महामना जी ने संस्थापक के रूप में एक अंग्रेजी अखबार भी प्रारम्भ किया। संस्कृत भाषी क्षेत्र के होने के बावजूद महामना जी ने सम्पूर्ण विश्व में भारतीयों की प्रतिभा का लोहा मनवाया।

समस्त उद्‌बोधनों से यह निष्कर्ष निकाला गया कि उच्च शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत समस्त व्यक्तियों को महामनाजी के विचारों, सिद्धान्तों एवं मूल्यों को आगे बढ़ाना चाहिए। आधुनिक समय में उनके जीवन दर्शन व उपदेशों की ज्यादा आवश्यकता है, अतः हमें उन्हें निश्चित रूप से अपने जीवन में आत्मसात करना चाहिए।

- डॉ. ज्योति जोशी
(समन्वयक, कार्यशाला)

ॐ भक्ति ऐसी करें कि ईश्वर हर क्षण ध्यान में रहे, कर्म ऐसे करें कि ईश्वर को प्रसन्न कर सकें। ॐ

प्रकाशक एवं सम्पादक डॉ. ज्योति जोशी, मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर, मालवीय नगर, जयपुर-302 017 • फोन : 9413971604, ई-मेल : malaviyaprakash.lokmat@gmail.com
सदस्य, सम्पादक मंडल : डॉ. अशोक शर्मा, डॉ. राजकुमार व्यास, डॉ. कैलाश सिंह, श्री सुशान्त उपाध्याय, श्री अंशु सक्सेना, योगेश डुचानिया (छात्र सदस्य)
लेजर टाईप सैटिंग एवं मुद्रण स्थल : द प्रिण्ट पैलेस, कैलगिरी रोड, मालवीय नगर, जयपुर-302 017 • फोन : 0141-4002016 • www.theprintpalace.com